पंचम अध्याय chapter-5

रीति कालीन स्त्रोत्र-साहित्य

डा० नगेन्द्र ने रीतिकाल के विषय में लिखा है कि ----"भीषण राजनीतिक नियमताओं ने बाह्य जीवन के विस्तृत क्षेत्र में स्वस्थ अभिव्यक्ति और प्रगति के सभी मार्ग अवरुद्ध कर दिये थे। निदान लोगों की वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होकर अस्वस्थ काम-विलास में ही अपने को व्यक्त करती थीं। वाह्य जीवन से त्रस्त होकर उन्हें अन्त:पुर की रमणियों की गोद में ही त्राण मिल सकता था। अतिशय विलास की रंगीनी नैराश्यकी कालिमा से ही अपने रंगों का संचय कर रही थी। युग-जीवन की गति जैसे रुद्ध हो गई थी।"[1] जब यह अवस्था देश और समाज की थी तो धार्मिक अवस्था का सरलता से अनुमान लगाया जा सकता है। डा० नगेन्द्र ने इस काल की धार्मिक प्रवृत्ति के विषय में भी लिखा है ----"धर्म का तात्त्विक विकास एकदम रुक गया था और उसके स्थान पर भक्ति के बाह्य विलास अत्यन्त समृद्ध हो गये थे। सेवा-अर्चना की सूक्ष्माति सूक्ष्म विधियों का आविष्कार हो गया था। जब भक्त लोग इस प्रकार ऐश्वर्य और विलास में संलग्न थे तो भगवान् उससे कैसे वंचित रहते। उनके विलास के लिए भी इतने साधन एकत्रित किये गये थे ----"कि अवध के नवाब तक को उनसे ईर्ष्या हो सकती या कुतुबशाह भी अपने अन्त:पुर में उनका अनुसरण करना गर्व की बात समझते।"[2]

एक प्रकार से देखा जाय तो रीति काल की श्रृंगारिक प्रवृत्तियाँ भक्ति काल में ही परिलक्षित होने लगी थीं। इस विषय में आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का यह मत अत्यंत ही समीचीन है ----"विचार करने पर अवगत होता है कि साहित्य की श्रृंखला में इस काल की कड़ी भक्तिकाल की कड़ी के

१- डा० नगेन्द्र --- रीतिकाव्य की भूमिका पृ० १५-१६

२- डा० नगेन्द्र --- रीतिकाव्य की भूमिका पृ० १६-१७

गर्भ से घूमती हुई आगे बढ़ी है। शुद्ध या पृथक रूप में श्रृंगार की प्रस्तावना इससे कम से कम सौ वर्ष पूर्व अर्थात् संवत् १६०० के आसपास अवश्य हो गई थी।[१] किंतु इस विषय में अधिकांश विद्वान् एक मत हैं कि रीतिकाल का प्रारम्भ सं० १७०० से ही हुआ था। यह स्थापना सर्वमान्य है।

कालगत प्रवृत्तियों के उपर्युक्त संक्षिप्त परिचय के साथ-साथ रीतिकालीन हिन्दी-साहित्य के विषय वैविध्य पर भी संक्षेप में यहां विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। इस दृष्टि-कोण से इसकाल की रचनायें निम्नलिखित प्रकार की हैं :--

(१) <u>रीतिबद्ध काव्य :</u>

जो रचनायें रीतिकालीन प्रवृत्तियों से आवद्ध होकर चलती हैं और जिनमें काव्यांगों का विवेचन, नायक-नायिका भेद, परम्परागत नखशिख, श्रृंगारिकता आदि विशेषतायें मुख्य रूप में विद्यमान रहती हैं। ऐसी रचनायें रीतिबद्ध कहलाती हैं। इस प्रकार की रचनायें मुक्तक रूप में मिलती हैं। इसका मूल कारण राज दरबार ही कहा जा सकता है। राजदरबारों में प्रबंधात्मक काव्य से काम नहीं चल पाता और न कला पटुता का ही उचित प्रदर्शन सम्भव हो पाता है। इस परम्परा के कवियों में सेनापति, जसवंतसिंह, मतिराम, देव, भिखारीदास, पद्माकर एवं ग्वाल प्रमुख हैं।

(२) <u>रीतिसिद्ध काव्य :</u>

इस प्रकार की रचनायें वे हैं जो उपर्युक्त रीति परंपरा में आवद्ध होकर तो चलती हैं परन्तु उनमें लक्षण ग्रन्थ के स्थान पर स्वतंत्ररूप से रचनायें प्रस्तुत की गई हैं। एक प्रकार से देखा जाय तो विषय की दृष्टि से यह रचनायें प्रथम प्रकार की रचनाओं के साथ रखी जा सकती हैं। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इस प्रकार के कवियों के साहित्य के विषय में लिखा

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र--- हिन्दी-साहित्य का अतीत द्वितीय भाग पृ० ३६७

है ---------[1] ऐसे कवि लक्षण ग्रन्थ लिखने वाले रीतिबद्ध कवियों की भांति रीति की शास्त्र कथित बातों का पूरा पालन नहीं करते थे । शास्त्र स्थिति-संपादन मात्र इनका लक्ष्य नहीं था । कहीं तो चमत्कारातिशय के लिए ये उक्तियां बांधते थे और कहीं रसाभिव्यक्ति के लिए रीति शास्त्रों में गिनाई हुई सामग्री का त्यागकरके अपने अनुभव और निरीक्षण से प्राप्त उपलब्धि सामग्री का नूतनता का संनिवेश करते थे ।[1] बिहारी, रसनिधि आदि इस परम्परा के प्रधान कवि हैं ।

(३) रीतिमुक्त काव्य :

इस प्रकार की रचनायें रीतिकालीन परम्परा से सर्वथा स्वतंत्र हैं । आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इसे स्वच्छंद-काव्य-धारा[2] माना है । इन रचनाओं के विषय में यह उल्लेखनीय है कि उनके अनेक कवि ऐसे हैं जिनकी विचारधारा में भक्ति तत्व पूर्णतया विद्यमान हैं । इस परम्परा के कवियों में शेख आलम, घनानंद, ठाकुर, बोधा एवं द्विजदेव प्रमुख हैं ।

(४) प्रशस्ति काव्य :

जिन रचनाओं में वीर रस की प्रधानता है उन्हें इस प्रकार के काव्यान्तर्गत रखा जा सकता है । राजाओं की प्रशस्तियोंके साथ साथ देवी-देवताओं की भी प्रशस्तियां लिखी गई हैं । जो स्तोत्र-साहित्य के अन्तर्गत आती हैं । भूषण की राजप्रशस्तियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जिस भावना से तुलसीदास जी ने राम के प्रति लिखा है उसी प्रकार भावना भूषण ने शिवाजी के प्रति प्रदर्शित की है । इस परम्परा के कवियों में जोधराज, भूषण, लाल, सूदन, चंद्रशेखर आदि प्रमुख हैं ।

(५) नीति, नाट्य एवं हास्य काव्य:

इस प्रकार की रचनाओं मे नीति हास्य और नाट्य तत्वों

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र -- हिन्दी साहित्य का अतीत
द्वितीय भाग पृ० ५५० -- सं० प्रथम

२- ,, ,, ,, पृ० ५८३

की प्रधानता है । गिरिधर कविराय की कुण्डलियाँ, दीन दयाल गिरि की अन्योक्ति प्रधान स्तुतियाँ, रहीम बृन्द आदि के दोहे नीति काव्य के अंतर्गत रखे जा सकते हैं ।

(६) <u>अनूदित काव्य :</u>

इस प्रकार की रचनाओं को साहित्यिक रचना - विधान की दृष्टि से 'अनुवाद काव्य'[१] के अन्तर्गत लिया है । ऐसी रचनाओं का परिणाम अत्यल्प है और विषय की दृष्टि से वे द्वितीय और तृतीय प्रकार की रचनाओं की कोटि में रखी जा सकती हैं । इस प्रकार की रचनाओं में भी हिन्दी स्तोत्रों की प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं । इस परम्परा में सबलसिंह गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव, गुमान मिश्र आदि उल्लेखनीय हैं ।

उपर्युक्त विभाजन के फलस्वरूप रीतिकालीन स्तोत्र-साहित्य निम्नोक्त रूप में उपलब्ध होता है जिनमें प्रथम अध्याय में वर्णित हिन्दी-स्तोत्रों की निम्नलिखित प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं :--

१- शुद्ध स्तोत्रात्मक

२- प्रशस्ति काव्य (राज-प्रशस्ति, देव-प्रशस्ति)

३- देवी-देवताओं का नखशिख (देवी-देवता)

४- अन्योक्ति रूप में

५- रीतिकाल में मिलने वाले स्तोत्र--- राम, कृष्ण, नृसिंह, गणेश, शिव, हनुमान, लक्ष्मण, सीता, पार्वती, राधा, रुक्मिणी, चंडी, दुर्गा, सरस्वती, यमुना, गंगा, अकाल पुरुष, अडेग आदि पर लिखे गए हैं जिनका विस्तृत विवेचन रीतिकाल की प्रत्येक परम्परा में क्रमानुसार किया जायेगा ।

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र--- हिन्दी-साहित्य का अतीत
भाग २, पृ० ८१२ ,
प्रथम संस्करण ।

रीतिबद्ध कवियों का स्तोत्र-साहित्य :

यद्यपि रीतिग्रन्थों की रचना करने वालों को ही रीतिबद्ध कवि माना गया है परन्तु इस वर्ग में ऐसे कवि भी हैं जिन्होंने प्रबन्धकाव्य, प्रशस्ति-काव्य आदि भी लिखे हैं । रीतिकाल के प्रवर्तक चिन्तामणि का लिखा हुआ `कृष्ण चरित` प्रबन्धकाव्य उपलब्ध हुआ है जिसके अतिरिक्त पद्माकर की हिम्मत बहादुर विरुदावली, ग्वाल कवि का `हम्मीर हठ` सूदन का सुजान चरित आदि रचनाएं इसी कोटि में आती हैं । इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे कवि भी हैं जिनमें रीतिसिद्ध और रीतिमुक्त कवियों की स्वच्छंद चेतना भी वर्तमान है । स्तोत्र के कवियों में देव का नाम अग्रणी है । जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि रीतिकाल की कड़ी भक्तिकाल के गर्भ से घूमती हुई आई है इसलिए सामान्यत: भक्तिकालीन स्तोत्र-साहित्य की प्राय: सभी प्रमुख विशेषताएं इस काल के साहित्य में मिलती हैं । अन्तर केवल इतना है कि भक्ति-भावना और आत्मसमर्पण की तल्लीनता का जो प्रवेग भक्ति कालीन स्तोत्र-साहित्य में प्राप्त होता है उसकी मात्रा एवं उत्कटता रीति कालीन साहित्य में कम ही होती चली गई है । इस काल के कुछ ऐसी भी स्तोत्रात्मक रचनाएं मिल जाती हैं जिन्हें निश्चित रूप से भक्ति कालीन स्तोत्र-साहित्य के समकक्ष रखा जा सकता है । इस परम्परा के कवियों ने अपने ग्रन्थों के प्रारम्भ में सफलता की कामना के लिए गणेश, सरस्वती आदि के मंगलाचरण लिखे हैं जो रीति काल के कवियों की एक सामान्य विशेषता थी । रीतिबद्ध काव्य के कवियों की एक और प्रमुख विशेषता यह है कि वे कवित्व के लाभ में चमत्कारित श्यपूर्ण उक्तियां बांधने में लीन रहते हैं ।[१]

उपर्युक्त तथ्यों के स्पष्टीकरण के लिए यहां समवर्ती काल के प्रमुख कवियों तथा उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दृष्टिगत कर लेना आवश्यक है ।

१- हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास- खण्ड ४ अ० १, पृ० ५०२

चिंतामणि त्रिपाठी :

इस परम्परा में आने वाले कवियों में चिंतामणि त्रिपाठी के काव्य में स्त्रोत्रात्मक अंश प्राप्त होते हैं । इनके लिखे हुए काव्य-ग्रन्थों में कविकुल कल्पतरू, काव्य विवेक, काव्य प्रकाश, रामायण, पिंगल एवं कृष्ण चरित प्रमुख हैं । इनमें कृष्ण चरित महाकाव्य में हिन्दी स्त्रोत्रों के रूप मिलते हैं। इन में गणेश, सरस्वती, श्री कृष्ण के स्त्रोत्र विशेष रूप में उल्लेखनीय हैं । रीतिकाल के प्रमुख आचार्य होने के कारण इन्होंने शास्त्रों की परिपाटी के अनुसार ही मंगलाचरण लिखे हैं । उनकी भक्ति विषयक रचना का नीचे उदाहरण में दिया जाता है :----

येई उधारत हैं तिन्हैं जे परे मोह-महोदधि के जल-फेरे ।
जे इनको पल ध्यान धरैं मन ते न परैं कबहूं जम-घेरे ।।
राजै रमा-रमनी उपधान अभै वरदान रहै जन मेरे ।
है बलभार उदण्ड भरे हरि के भुजदण्ड सहायक मेरे ।।[1]

चिन्तामणि के द्वारा जो वन्दनायें और स्त्रोत्र लिखे गए हैं उनमें भी यह चमत्कारिक प्रवृत्ति मिलती है । इसके कारण भक्ति-भावना का स्वर मंद हो जाता है ।

मतिराम :

चिन्तामणि के पश्चात् रीतिकालीन रीतिबद्ध कवियों में इनका स्थान अत्यन्त ही महत्वपूर्ण माना जाता है । इनके लिखे अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें डा० त्रिभुवन सिंह ने 'फूलमंजरी', रसराज, छन्दसार, ललित ललाम, मतिराम सतसई, साहित्यसार, लक्षण श्रृंगार तथा अलंकार पंचाशिका[2] को प्रमाणिक माने हैं । इन ग्रन्थों की काव्यशास्त्रीयता अत्यन्त ही महत्व पूर्ण है । कवि और आचार्य दोनों का उत्कृष्ट रूप मतिराम में देखा जा सकता

१- चिन्तामणि त्रिपाठी ---- रामायण

२- डा० त्रिभुवन सिंह ---- महाकवि मतिराम और मध्यकालीन हिन्दी कविता में अलंकरण वृत्ति पृ० १२४

है, जैसा कि डा० त्रिभुवन सिंह ने लिखा है कि --"इनमें इन दोनों गुणों का अद्भुत संमिश्रण हुआ है। शृंगार सम्बन्धी मानव अनुभूतियों के समस्त मार्मिक भावों को सफल अभिव्यक्ति देने में मतिराम सफल हुए हैं। काव्य की कलात्मकता की पूर्णरूपेण रक्षा करते हुए स्वाभाविकता से दूर न हटना मतिराम ऐसे प्रतिभा सम्पन्न कलाकार का ही कार्य है"[1]। उनके सभी ग्रन्थों में काव्य शास्त्रविहित मंगलाचरण मिलते हैं। इस प्रकार उनके सब ग्रन्थों में आंशिक रूप में स्त्रोत्रों का अस्तित्व है। रीतिकालीन शृंगारिकता से प्रभावित होने के कारण उन्होंने राधा कृष्ण का 'नखशिख' भी लिखा है जिस में उनकी मानसिक तन्मयता का यथार्थ रूप देखा जा सकता है। मतिराम सतसई के प्रारम्भ में भी उन्होंने वंदना रूप में 'राधा कृष्ण' का मंगलाचरण किया है :----

मो मन तम -तोमहि हरौ राधा को मुखचंद।
बढ़ै जाहि लखि सिंधु लौं नंद नंदन आनंद ।।१।।
मुंज गुंज के हार उर मुकुट मोर पर कंज।
कुंज बिहारी बिहरियै मेरेई मन-कुंज ।।२।।
रति नायक सायक सुमन सब जग जीतन हार।
कुवलय दल सुकुमार तन, मन कुमार जय मार ।।३।।
राधा मोहन लाल को जाहि न भावत नेह।
परियौ मुठी हजार दस ताकी आखिनि खेह ।।४।।

---- मतिराम सतसई।

मतिराम के काव्य में उनकी व्यंजना शक्ति, अलंकारिता और वक्रता आदि का अत्यंत ही मनोहारी रूप विद्यमान है। भावों की मधुर व्यंजना और उसका सामंजस्य उनकी कविता का एक श्रेष्ठ गुण है। उसमें स्वाभाविक प्रवाह के साथ-साथ भाषा की सुकुमारता भी प्रशंसनीय है। कृष्णभक्त कवियों के लिखे हुए साहित्य में भी अतिशय शृंगारिकता मिलती है। परन्तु उनकी शृंगार

१- डा० त्रिभुवन सिंह ---- मतिराम सतसई -- पृ० २६२

भावनाओं में भी आध्यात्मिकता की उदात्त ज्योति सतत जागृत रहती है। जिस प्रकार कृष्ण भक्त कवियों ने राधा-कृष्ण की श्रृंगारिक वन्दनाएं लिखी हैं वैसी ही रीति कालीन कवियों ने भी लिखी हैं। वस्तुत: जैसा कि डा० नगेन्द्र ने लिखा है ---" ऐसी रचनाओं के लिए रीतिकाल में कवियों को कृष्ण भक्ति की परम्परा से नैतिक अनुमति भी मिल गई थी। इस लिए रीतिकालीन कवियों की लिखी हुई स्त्रोत्रात्मक रचनाओं में भी प्रेम और भक्ति के स्थानपर रसिकता का ही पुट अधिक मिलता है। मतिराम रससिद्ध कवि थे। उनकी रस सिक्त रचना से यह अन्तर स्पष्ट किया जा सकता है :---

क्यों इन आंखिन सों निहसंक ह्वै मोहन को तन पानिय पीजै ?
नेकु निहारे कलंक लगै यहि गांव बसे कहु कैसे कै जीजै ?
होत रहै मन यों मतिराम, कहूं बन जाय बड़ो तप कीजै।
ह्वै वनमाल हिये लगिये अरु ह्वै मुरली अधरारस पीजै ॥
--- रसराज।

यथार्थ भक्ति भावना से ओत-प्रोत होने के कारण भक्त सदैव भगवान के चरणों के ही सन्निकट रहना चाहता है किन्तु प्रेम में प्रियतम का मुखारविंद ही आनंद प्रदान करता है। उपर्युक्त छंद में मतिराम की भक्ति -भावना श्रृंगारिकता से ओतप्रोत है, क्योंकि कवि की दृष्टि कृष्ण के चरणों पर न जाकर उनके हृदय और अधरों पर गई है। यही कारण है कि वह वनमाल और मुरली बनना चाहता है। इस प्रकार इसमें सायुज्य की उत्कट अभिलाषा व्यक्त की गई है। वैसी भावना व्यक्त करने वाले सूरदास आदि भक्तों के भी अनेक पद मिलते हैं। परन्तु थोड़ा सा ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां मतिराम आदि कवियों की भाव सत्ता ऐन्द्रिय आनन्द में ही अनुरक्त होकर रह गई है वहां सूरदास आदि भक्त कवियों की इस प्रकार की रचनाओं में आत्मा का सात्विक सौंदर्य अभिव्यक्त हुआ है। तात्पर्य यह है कि रीति कालीन कवियों की दृष्टि जहां शरीर के सौंदर्य पर ही अटकी रह जाती है वहां भक्त कवि बहुत आगे बढ़ जाता है।

भूषण :

भूषण प्रशस्तिकार और रीतिकार दोनों माने जाते हैं। इन्होंने अपने समय की परम्परा के अनुसार 'शिवराज भूषण' नामक रीतिशास्त्रीय ग्रन्थ लिखा है जिसमें अलंकारों का विवेचन किया गया है। अन्य ग्रन्थों में 'शिवा बावनी' छत्रसाल दशक एवं फुटकर रचनायें हैं। भूषण की भी रचनाओं में गणेश, कालिका एवं सूर्य के स्तोत्र मिलते हैं। शिवराज भूषण के रीति शास्त्रीय होने पर भी कवि ने उसमें रीतिकालीन प्रचलित परिपाटी के अनुसार गणेश का मंगलाचरण किया है :--

विकट अपार भवपंथ के चले को
स्त्रम हरन करन बिना से ब्रह्म ध्याइए।
यहि लोक परलोक सुफल करन कोकनद
से चरनहि ये आनि कै जुड़ाइए ।
अलिकुल कलित कपोल ध्यान ललित आनंद रूप
सरित में भूषन अन्हाइए ।
पापतरु भंजन, विघन गढ़ गंजन,
जगत - मनरंजन द्विरदमुख, जाइये ।।१।।

यह वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण है।

कवि ने कालिका की स्तुति करके महाराज शिवराज की विजय की कामना की है :--

जै जयंति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनि ।
जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिष-विमर्दिनि ।।
जै चमुंड जै चंडमुंड भंडासुर- खंडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल-विहंडिनि ।।
जै जै निसुंभ सुंभ हलनि भनि भूषन जै जै भननि।
सरजा समत्थ सिवराज कहं देहि विजै जै जग-जननि ।

---शिवराज भूषण ।

शिवराज भूषण में कवि ने सूर्य की भी वंदना की है :--

तरनि जगत जलनिधि तरनि जै जै आनंद ओक ।
कोक कोकनद सोकहर, लोक लोक आलोक ।।३।।

---शिवराजभूषण ।

इस प्रकार भूषण ने शिवाजी और छत्रशाल का प्रशस्तिगान करते हुए अपनी रीतिशास्त्रीय परम्परानुसार मंगलाचरण वंदना स्तुति आदि हिन्दी स्त्रोत्रों की प्रवृत्तियों का विवेचन करने का प्रयास किया है ।

भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन साहित्य में सूर्य के स्त्रोत्र अथवा वंदनायें अत्यंत विरलरूप में ही प्राप्त होती हैं । संभवत: सूर्य की वन्दना करने में भूषण के ध्यान में दो बातें रही होंगी । उनके चरित नायक सूर्य वंशी थे और तेज एवं प्रताप में भी वे सूर्य के समान थे । जिस प्रकार रात्रि का अंधकार हटाकर सूर्य प्रकाशित होता है, उसी प्रकार मुस्लिम दासता और अत्याचार के तिमिर को अपसारित करते हुए शिवाजी का अभ्युदय हुआ था । यह चेतना भूषण के कवि मानस में रही होगी ।

भूषण की अन्य रचनाओं में भी स्त्रोत्रों जैसा औदात्य है । कारण, भूषण ने शिवाजी की प्रशस्ति-रचना धन या मान के लोभ से नहीं की थी । वे शिवाजी को राम,कृष्ण और विक्रम की परम्परा का लोकनायक और धर्म रक्षक मानते थे । इसीलिए उन्होंने लिखा है कि कलि के कविराजों ने आज के राजाओं का यश-वर्णन करके वाणी को कलुषित किया है । उसी वाणी को मैं ने शिवा सरजा के यथा सरोवर स्नान करवाकर पुन: पवित्र बना दिया है । भूषण शिवाजी को राम और कृष्ण का अवतार मानते हैं और यह भावना उनकी शिवाजी विषयक अनेक रचनाओं में विद्यमान है ।

१- मच्छहु कच्छहु मैं कोल नृसिंह मैं वामन मैं मनि भूषन जो है ।
जो द्विजराज मैं जो रघुराम मैं जो वै कन्हौ बलरामहु को है ।।
बौद्ध मैं जो अरु जो कलकी महं विक्रम हूवे को आगे सुनो है ।
साहस भूमि-अधार सोई अब श्रीसरजा सिवराज में सोहै ।

२- ब्रह्म के आनवते निकसे ते अत्यन्त पुनीत तिहूं पुर मानी ।
राम युधिष्ठिर के बरनै बलमीकहु व्यास के अंग सोहानी।।
भूषन यों कलिके कविराजन राजन के गुन गाय नसानी ।
पुन्य चरित्र सिवा सरजै सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ।।

३- बारिधि के कुंभ भव घन बनदावानल, तरुण तिमिरहू के
किरन समाज हौ ।
कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल,
कैटभके कालिका विहंगम के बाज हौ ।
भूषन भनत जग जालिम के सचीपति,
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ ।
रावण के राम छितिपाल के परसुराम
दिल्लीपति दिग्गज के सिंह शिवराज हौ।।

---- शिवा बावनी ।

देव :

महाकवि देव रीतिकालीन कवि-परम्परा के सर्व श्रेष्ठ कवियों में हैं । उनका व्यक्तित्व भावुकता, प्रतिभा अध्ययन और अनुभव से समृद्ध तो था, परंतु उसमें बौद्धिक शक्ति और कर्म काठिन्य का अभाव है।[1] उनके लिखे ग्रन्थों में भाव-विलास, अष्टयाम, भवानी विलास, शिवाष्टक, प्रेमतरंग, कुशल-विलास, जाति-विलास, रसविलास, प्रेम-चंद्रिका, रसानंद लहरी, रागरत्नाकर, शब्द-रसायन, देव-चरित्र, देव माया प्रपंच-नाटक, देव शतक एवं सुख-सागर तरंग है। इन ग्रन्थों में देव ने श्रृंगार, वैराग्य एवं रीतिशास्त्रीय विवेचन किया है । परन्तु श्रृंगारिक होने के साथ-साथ उनमें धार्मिक भावना भी उच्चकोटि की है। राधा-कृष्ण के अतिरिक्त उनकी रचनाओं में राम-सीता, शिव-पार्वती, दुर्गा, सरस्वती आदि के प्रति भी भक्ति भाव की प्रवणता का दर्शन होता है । उन्होंने ब्रह्म की निराकारता को भी सम्यक महत्व दिया है । इन कारणों से बिना

१- डा० नगेन्द्र ---- देव और उनकी कविता पृ० ३६

बिना किसी अकाट्य प्रमाण के किसी सम्प्रदाय विशेष से उनका सम्बन्ध निर्देश करना कठिन है । डा० नगेन्द्र ने इनके भक्ति-भाव के विषय में लिखा है ----"उनके काव्य की आत्मा और विभिन्न ग्रन्थों के मंगलाचरणों से इसमें सन्देह नहीं रह जाता कि वे वैष्णव थे और उनके इष्ट देव राधा कृष्ण ही थे । कुछ विद्वानों ने उनकी भक्ति-भावना को और भी संकुचित कर उन्हें गोस्वामी हित हरिवंश की शिष्य परम्परा में 'राधा वल्लभीय' सम्प्रदाय का अनुयायी बताया है परन्तु इसका न तो कुछ बहि:साक्ष्य ही मिलता है और न अन्त:साक्ष्य ही । राधा के प्रति उनके ग्रन्थों मे कोई निश्चित झुकाव नहीं मिलता।जो थोड़ा-बहुत है भी वह इसकारण है कि देव का काव्य श्रृंगारिक है और राधा स्त्री है, अतएव श्रृंगार की सारप्रतिमा नायिका के साथ राधा का तादात्म्य करने में उन्हें सरलता रही है । वैसे जो छंद शुद्ध भक्ति भाव से प्रेरित है वे श्री कृष्ण को ही लक्ष्य कर रचे गये है"।[१]

देव की रचनाओं में मंगलाचरण, वंदना, प्रार्थना आदि स्तोत्र के अनेक रुप मिलते हैं । देवी-देवताओं की वंदना के साथसाथ देव की रचनाओं में गुरु की भी वंदना की गई है । देव के गुरु कौन थे, यह बता सकना कठिन है । परन्तु उनके हृदय में गुरु के प्रति असाधारण श्रद्धा और भक्तिथी, यह उनके गुरु-विषयक मंलाचरणों से स्पष्ट हो जाता है :--

> देव चरित गुरुदेव की , महिमा कहि जग मौन ।
> अघ अजगर लीलै न तरु, जियत निकासै कौन ?
> श्री गुरुदेव कृपाल की , कृपा-सुबुद्धि समीप।
> तिमिरु मिटै प्रगटै हृदय मंदिर अनुभव-दीप ।।
>
> --- शब्द रसायन ।

देवी-देवता-विषयक मंगलाचरणों में आशीर्वादात्मक भावना का प्रदर्शन किया गया है और ग्रन्थ के सफल प्रणयन की कामना व्यक्त की गई है ।

१- डा० नगेन्द्र ---- देव और उनकी कविता पृ० १२३-१२४ ।

पायन नूपुर मंजु बजै कटि किंकिनि में धुनि की मधुराई ।
सांवरे अंग लसै पट पीत, हिए हुलसै वन -माल सुहाई ।।
माथे किरीट बड़े दृग चंचल मंद हंसी मुख चंद्र-जुन्हाई ।
जै जग मंदिर-दीपक सुंदर श्री ब्रज-दूलह देव-सहाई ।।

---- देवरत्नावली ।

वंदना :

अपनी रचनाओं मे देव ने श्री कृष्ण, राधा, सरस्वती, गौरी, लक्ष्मी, रूक्मिणी, जानकी आदि की वंदना की है ।[१] देवचरित्र के अंतिम छंदों में श्री कृष्ण के ऐश्वर्य का गान करके उनकी वंदना की गई है[२]। अपनी अनेक वंदनाओं में देव ने अद्वैत के निर्गुण ब्रह्म और वैष्णवों के सगुण का भी विवेचन किया है । इस प्रकार की वन्दनाओं में उनके तात्विक चिंतन का रूप प्राप्त होता है :----

वेदनहू गनै गुन गनै अनगने भेद, भेद बिनु जाको निरगुन हू यहै।
केतिक विरंच्यों, महासुखनको संच्यो जहां,वंच्यो ब्रज भूपसोई
परब्रह्म भू यहै ।।

--- देव शतक ।

उद्धव प्रसंग में सगुणोपासक कवियों की भांति कृष्ण की महिमा का गान किया गया है :--

कंस रिपु अंस अवतारी जदुवंस.कोई,
कान्ह सो परमहंस कहै तो कहासरो ।
हयतो निहारे ते निहारे ब्रजवासिन मैं,
देव मुनि जाको पचि हारे निसिवासरो ।

---- देवशतक ।

१- सुखसागर तरंग (प्रथम अध्याय)

२- देवचरित ।

स्तुति :

'शिवाष्टक' में शिव की स्तुति के साथ कवित्त हैं।[1] 'भवानी विलास' में मंगलाचरण में ग्रन्थ निर्देशिका स्तुति है।[2]

इस प्रकार रीतिकालीन कवियों की परम्परा में आने वाले कवियों में देव की स्तोत्रात्मक रचनाएं बड़ी ही भक्ति भावना से परिपूर्ण हैं। इनमें उनकी कला चातुरी के साथ-साथ भक्ति की सुंदर अभिव्यंजना भी स्पष्ट हुई है। आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने इनके विषय में लिखा है --"इसकाल के बड़े कवियों मे इनका विशेष गौरव का स्थान है। कहीं-कहीं इनकी कल्पना बहुत सूक्ष्म और दूरारूढ़ है।[3]

भिखारीदास :

रीतिबद्ध कवि-परम्परा में भिखारीदास जी आचार्य और कवि दोनों रूपों में आते हैं। केशवदास की भांति इन्होंने पांडित्य-प्रदर्शन करके अपनी रचनाओं को बोझिल नहीं बनाया वरन् उच्चकोटि के कवियों की भांति समन्वयात्मक भावना अपनाने का प्रयत्न किया। इस प्रकार इनकी रचनाओं में कलापक्ष और भाव पक्ष दोनों का पूर्ण सामंजस्य हुआ है।

रीतिशास्त्रीय आचार्य होने के कारण 'काव्य-निर्णय', 'रससारांश', श्रृंगार निर्णय, छंदार्णव, नाम प्रकाश, विष्णु पुराण, शतरंजिका, आदि ग्रन्थों के प्रारम्भ में कवि ने गणेश, शिव, पार्वती, परम पुरुष एवं भगवान् के दशावतारों के मंगलाचरण लिखे हैं। साधारणतया रीतिबद्ध कवियों की प्रवृत्ति के कारण इन प्रसंगों में भक्ति-भावना का स्वर मन्द हो गया है और चमत्कार की प्रवृत्ति प्रायः प्रधान हो गई है। इसके प्रमाणस्वरूप काव्यनिर्णय का मंगलाचरण प्रस्तुत किया जा सकता है :---

---

१- डा० नगेन्द्र-- देव और उनकी कविता पृ० ४८

२- डा० नगेन्द्र -- देव और उनकी कविता पृ० ४६

३- आचार्य रामचंद्र शुक्ल-- हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० १६७

एक रदन द्वै मातु, त्रिचख, चौ बाहु चपकर ।
षट आनन बर वंधु सैव्य, सप्तर्चि माल धर ।।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि-दानि, दस-दिसि जसविस्तर ।
रूद्र इग्यारैं सुखद द्वाबसादित्य ओजवर ।।
जो त्रिदस-वृंद वंदिन चरंन, चौधैं विघंन आदिगुरू ।
तिहि दास पंचदस हूं तिथिनि, धरिय षोडसौ ध्यान उर ।।

---- काव्य-निर्णय ।

इन ग्रन्थारम्भ के स्तोत्रों में कवि का उद्देश्य शास्त्रीय परम्परा का अनुगमन ही कहा जा सकता है ।

इसमें कविने छप्पय छंद में तिथिरूप एक अंक से लेकर सोलह अंको से षोडसौ पचार रूप श्री गणेश जी की वंदना की है। ये अंक कहीं संख्या-वाची और कहीं श्लेष से संयुक्त होकर दूसरे-दूसरे अर्थों की उत्पत्ति करते हैं इस प्रकार जहां इस छंद में कवि की काव्य-पटुता , कल्पना-शक्ति और साहित्यिक ज्ञान का अनुभव किया जा सकता है वहां गणेश जी को षोढष कला पूर्ण बताने के लिए रत्नावली अलंकार-द्वारा अलंकरण की कवि-प्रतिभा भी देखी जा सकती है ।[1] इस प्रकार यह सिद्ध है कि कवि वंदना के साथ-साथ काव्य चमत्कार भी उपस्थित करना है ।

इसमें कवि ने मंगलाचरण का ध्यानात्मक रूप उपस्थित किया है ।

रससारांश :

इस ग्रन्थ के मंगलाचरणों को कवि ने तीन रूपों में लिखा है जिनका विवेचन नमस्कारात्मक, ध्यानात्मक, एवं आर्शीवादात्मक रूप में किया गया है।

नमस्कारात्मक :-- इसमें कवि श्रद्धायुत होकर गणेशजी की वंदना करता है :--

---

१- डा० सत्येन्द्र ------ काव्य-निर्णय पृ० १

कदन अनेकन विघनको एकरदन गनराउ ।
वंदन जुत वंदन करौं पुष्कर पुष्कर पाउ ।।३।।
------- रससारांश ।

ध्यानात्मक:-- इसमें कवि गणेशजी का ही ग्रंथारम्भ में ध्यान करता हुआ उसकी वंदना करता है :--

बक्रतुंड कुंडलित सुंड नगबलित पांडुरद ।
अलिघुमंड-मंडलित दान मंडित सुगंध मद ।।
बाहुदंड उदंड दुष्टझुंडनि अमुंडकर ।
विघ्न खंड कर खंड ओज सर-मारतंड-बर ।।
श्रीखंड परसुनंदन सुखद 'दास' चंड चंडीतनय ।
अभिलाष लाख लाहन समुझि राखु आखुवाहन हृदय।।
---- रससारांश ।

आशीर्वादात्मक:- ऐसे मंगलाचरणों में कवि इष्टदेव की वंदनाकरके अपने ग्रंथ की समाप्ति की आकांक्षा करता है । वास्तव में ग्रंथारम्भ के मंगलाचरणों में रीतिशास्त्रीय आधार पर यही उद्देश्य माना जाता है:--

करौ चंद-अवतंस, मो मन को अगमौ सुगम ।
काढ़ौ रससारास सुमति-मथानी मथनुकरि ।।४।।
----- रससारांश ।

छंदार्णव :

यह पिंगलशास्त्र का ग्रन्थ है । इस मंगलाचरण में गणेश, शेषनाग एवं गरूण की वन्दना स्वरूप लिखे गये हैं । शेषनाग एवं गरुण पिंगल शास्त्र के आदि आचार्य माने गए हैं वस्तुत: इनपर मंगलाचरण लिखने का मूल उद्देश्य उनके प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करना ही है । उनकी कृपामात्र से ही कार्य में सफलता मिल सकेगी । प्रथम मंगलाचरण में कवि ने गणेश जी की वंदना करके अपने ग्रन्थ की समाप्ति की कामना की है । इस प्रकार यह आशीर्वादात्मक मंगलाचरण है :--

करि-वदन-विमंडित औज-अखंडित पूरन पंडित ज्ञानपरं ।
गिरि-नंदिनि-नंदन असुर निकंदन सुर-उर-चंदन कीर्तिकरं ।
भूषन मृगलछान वीर-विचछान जन-प्रन-रछान पासधरं ।
जय जय गन-नायक खल-गन-घायक दास-सहायक विघन हरं ।।
----- छंदार्णव ।

छंदार्णव में ध्यानात्मक मंगलाचरणों के भी अनेक उदाहरण हैं । कवि ने गणेश के अतिरिक्त पिंगल नागनरेश अर्थात् शेषनाग का भी ध्यान किया है:--

श्री विनतासुत देखि परम पटुता जिन्ह कीन्हेउ ।
छंद भेद प्रस्तार वरनि बातनि मन लीन्हेउ ।।
नष्टोद्दिष्टनि आदि रीति बहु विधि जिन भाख्यौ ।
जैबौ चलत जनाइ प्रथम बाचापन राख्यौ ।।
जो छंद भुजंग प्रयात कहि जात भयौ जहं थल अमय ।
तिहि पिंगल नाग नरेस की सदा जयति जय जयति जय ।।६।।
--- छंदार्णव

नमस्कारात्मक मंगलाचरण के रूप में कवि ने विष्णुरथ अर्थात् गरुण की विनययुत वंदना की है :---

जिन थुगट्यौ जग में विविधि छंद नाम अभिराम ।
ताहि विष्नुरथ कौं करौं विबिकर जोरि प्रनाम ।।४।।
----- छंदार्णव ।

कुछ ग्रन्थों में कवि ने गणेश, शिव एवं पार्वतीका एक ही साथ मंगलाचरण किया है जिसमें वह गणेशजी को जगद्गुरु, पार्वती जी को जगज्जननी एवं शिवजी को जदगीश मानकर वंदना करता है[1]। इसी प्रकार कवि ने एक ही साथ भगवान के दसावतारों का भी ध्यान करते हुए वंदना की है[2]। विष्णु-पुराण, एवं शतरंजशतिका में गणेश, विष्णु, ब्रह्मा, गुरु एवं परम पुरुषपर

१- श्रृंगार निर्णय ---- छंद १
२- श्रृंगार निर्णय ---- छंद २

पर मंगलाचरण लिखे गये हैं ।

'विष्णु पुराण' संस्कृत के विष्णु पुराण का भाषानुवाद है और संभवत: कवि ने विष्णु एवं ब्रह्मा के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करने के लिए ही उनका मंगलाचरण किया है । अनेक उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है :---

जो इन्द्रिन को ईस विस्वभावन जगदीस्वर ।
जो प्रधान बुध्यादि सकल जग को प्रपंचकर ।।
परम पुरुष पूरवज सृष्टि थिति लय को कारन ।
विस्नु पुंडरीकाक्ष मुक्तिप्रद भुक्ति सुधारन ।।
जेहि दास ब्रह्म आक्षार कहिय, जो गुन-उदधि-तरंगमय ।
तेहि सुमिरि सुमिरि पायन परिय करिय जयति जय जयति जय ।।

--- विष्णु पुराण ।

कवि ने एक ही छंद में ब्रह्मा, विष्नु एवं गुरु की वन्दना की है और गुरु को ब्रह्मा एवं विष्णु के समकक्ष ही माना है :---

विनय विस्नु ब्रह्मादि पुनि गुरु चरनन सिर नाइ ।
बातें विस्नु पुरान की भाषा कहौं बनाइ ।।

--- विष्णु पुराण ।

'शतरंजशतिका' में परम पुरुष की वंदनास्वरूप मंगलाचरण लिखा गया है :---

परम पुरुष के पाय परि पाय सुमति सानंद ।
दास रचै सतरंज की सतिका आनंद कंद ।।

---- शतरंजशतिका ।

'नाम प्रकाश' एवं 'शतरंजशतिका' में रीतिशास्त्रीय परम्परानुसार गणेश के प्रति ही मंगलाचरण लिखे गए हैं :---

राजन्ह श्रीपद मंत्रिन्ह मंत्रद सूर सुबुध्यनिकौं जु सहायक ।
उदुर-अस्व अरुढ हुवं ध्यावहू दौरिकै दास मनोरथ दायक ।।
चौंसठि चारु कलानि कौ लाभु विसातिन बूझिये वंदि विनायक।
सिंधुर आनन संकट भानन ध्यानसदा संतरंजन लायक ।।

----- शतरंज शतिका छंद -१ ।

भिखारीदास के विभिन्न देवताओं के प्रति किए मंगलाचरणों से यह सिद्ध होता है कि वे गणेश के साथ-साथ अन्य देवताओं का भी काव्य की सफलता के लिए आह्वान करते हैं ।

अनेक कवियों ने ग्रन्थों के उपसंहार में भी अपने इष्टदेवादि की वंदनायें की हैं । उसी प्रकार की वन्दना काव्य-निर्णय के उपसंहार में भी की गई है। उसका एक उदाहरण दिया जा रहाहै :--

आपद सै-सिर-सत्रु हत्यौ, थैं तै -सिर दारिद का वध कीहै ।
सिंध-बंधाइ तैंरै तुम तौं, थै तारक मौह-महादधि कौहै ।।
रावरे कौ सुनिए जस जाहर, बासी सबै घटकै मधिकौहै ।
राम जू रावरे नाम मैं 'दास', लख्यौ गुन रावरे तै अधिकौहै ।

---- काव्य निर्णय ।

उपसंहारात्मक वंदना ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के उपलक्ष्य में इष्ट-देवादि के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के निमित्त लिखी गई हैं । इस प्रकार की वंदनाओं में फलश्रुति भी कभी-कभी मिलती है ।

जसवंतसिंह (प्रथम):

इस परम्परा के श्रेष्ठ कवियों में जसवंतसिंह का नाम गण्य है जिनके ग्रन्थों में आंशिक रूप में स्तोत्र प्राप्त होते हैं । वे या तो मंगलाचरण रूप में हैं या देवताओं की स्तुति रूप में । इस प्रकार उनकी कृतियों के दो विभाग

किए जा सकते हैं :--

१- लक्षणग्रन्थ

२- आध्यात्मिक

<u>लक्षणग्रन्थ :</u>

इस प्रकार की कृतियों में भाषा-भूषण प्रमुख है । यह एक रीति-ग्रन्थ है और इसमें कवि ने पांच आननों में रीतिशास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत किया है । परन्तु इस ग्रन्थ की प्रमुख विशेषता यह है कि इसका प्रथम आनन स्तोत्रात्मक है और उनमें गणपति, सृष्टिकर्ता ब्रह्म, ईश्वर, अन्तर्यामी ब्रह्म और कृष्ण की स्तुति की गई है । इन पाँचों स्तोत्रों में हिन्दी स्तोत्र-साहित्य की मंगलाचरण , वंदना, स्तुति, सुमिरनी, एवं विरुद की प्रवृत्तियां पायी जाती हैं जैसा कि निम्नलिखित उदाहरणों से प्रकट है :--

(१) मंगलाचरण :-

रीतिकाल के समस्त कवियों की भांति भाषा-भूषण में भी मंगलाचरण किया गया है जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रंथ की समाप्ति की कामना ही है । पूर्ववर्ती पृष्ठों में विवेचित मंगलाचरण के तीन प्रकारों---आशीर्वादात्मक, नमस्कारात्मक, वस्तुनिर्देशात्मक-- में से भाषा-भूषण का प्रथम दोहा नमस्कारात्मक मंगलाचरण की कोटि का है जिसमें परम्परानुसार सिद्धिदाता गणेश का वंदना करके ग्रन्थ पूर्ति की कामना की गई है :--

विघन हरन तुम हौ सदा, गनपति होहु सहाइ ।
विनती कर जोरे करौं दीजै ग्रंथ बनाइ ।।

--- दोहा -१ ।

(२) वंदना :-

भाषा-भूषण का द्वितीय दोहा बन्दनात्मक है जिमें सृष्टिकर्ता परमात्मा की वन्दना की गई है :--

जैहि कीनो परपंच सब अपनी इच्छा पाइ ।
ताकों हौं बंदन करौं हाथ जोरि सिर नाइ ।।

---- दोहा -- २

(३) स्तुति :-

मूषण का चतुर्थ दोहा स्तुति प्रधान है और इसमें कवि ने अन्तर्यामी परमात्मा की स्तुति की है :--

मेरे मन में तुम बसौ ऐसी क्यों कहि जाइ ।
तातैं यह मन आपसौं लीजै क्यों न लगाइ ।।

---- दोहा -४

(४) सुमिरनी :-

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि जब कवि अपने इष्टदेव के महान गुणों का स्मरण करता हुआ उसकी स्तुति करता है तो स्तोत्रात्मक रचना विधान की दृष्टि से वह स्तुति के अन्तर्गत आती है । भाषा-मूषण के तृतीय दोहे में इसी कोटि का वर्णन है :--

करुना करि पोसत सदा सकल सृष्टि के प्रान ।
ऐसे ईश्वर के हिए रहौ रैनि दिन ध्यान ।।

---- दोहा --३ ।

(५) बिरुद :-

पूर्ववर्ती विवेचन सेप्रकट है कि बिरुद की कोटि में आने वाले स्तोत्र कवि में देवता के प्रशस्तिगान द्वारा उसके प्रति अपना भक्ति -भाव प्रदर्शित करता है । निम्नलिखित दोहे में कृष्ण के महान गुणों का वर्णन इसी प्रकार है :--

रागी मन मिलि स्याम सौं, भयो न गहिरो लाल।
यह अचरज उज्जवल भयो, तज्यौ मैल तिहिं काल ।।

-----दोहा --५ ।

(६) आध्यात्मिक ग्रन्थ :-इस प्रकार के ग्रन्थों में अनुभव प्रकाश, अपरोक्ष-सिद्धान्थ, आनंद विलास, सिद्धान्त बोध, एवं सिद्धान्त सार आते हैं । यह ग्रंथ वेदना विषयक माने जाते हैं । इनमें से अपरोक्ष सिद्धान्त और सिद्धान्त बोध के प्रारम्भ में ब्रह्म और गुरु की वन्दना की गई है । ब्रह्म को इन्होंने निर्गुण और सगुण दोनों रूपों में माना है ।

इस प्रकार जसवंत सिंह ने रीतिबद्ध कवि होते हुए भी हिन्दी स्त्रोत्रों की सभी प्रमुख परम्पराओं का पालन किया है और उन पर श्रृंगारिकता का प्रभाव नहींपड़ने पाया है ।

पद्माकर :

पद्माकर अस्तोन्मुख रीतिकाल के प्रमुख कवि हैं । " उनमें न तो किसी विशिष्ट सिद्धान्त का प्रतिपादन है और न आचार्यत्व की पांडित्यपूर्ण प्रतिभा । वे मुख्यत: कवि हैं, युग की परम्परा का अनुसरण करते हुए उनको अलंकार विषय पर भी पुस्तक लिखनी पड़ी है ।[१] श्रृंगारिक रचनाओं के अतिरिक्त इन्होंने भक्ति-विषयक रचनाएं भी की हैं जो स्त्रोत्रात्मक हैं । इनकी इस भक्ति-भावना के विषय में डा० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी ने लिखा है -----"पद्माकर की भक्ति विषयक रचनाओं में संसार की जटिलताओं का कथन है । विषय एवं विकट परिस्थिति के फेर में पड़े रहने के कारण उनके हृदय में जो आत्म-ग्लानि हुई और फलस्वरूप जो भक्ति-भावना जाग्रत हुई इनकी भक्ति-विषयक कविता के निर्माण का वे ही मूल कारण बनीं ।[२] गंगा लहरी, यमुना लहरी, प्रबोध पचासा, लिलहारी लीला एवं ईश्वर पचीसी, उनकी भक्ति विषयक रचनायें हैं । उनकी भक्ति विाष्यक रचनाओं की प्रमुख विशेषता यह हैकि उनमें देव की भांति भक्ति की सच्ची भावना के दर्शन होते हैं । भक्ति की यह भावना भले हीसांसारिक कष्ट सहन करने के परिणामस्वरूप आई हो , पर इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि उसमें समर्पण की तीव्र भावना वर्तमान है और उसके द्वारा सच्चाई और अटल आस्था और विश्वास की अभिव्यक्ति होती है :--

---

२- डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी --- रीतिकालीन कविता एवं श्रृंगार रसका विवेचन , पृ० ४८१ ।

१- हिन्दी-साहित्य का बृहत इतिहास ,, ,, पृ० ४७४ । षष्ट भाग--- खण्ड ३, अध्याय ५, सं० डा० नगेन्द्र ।

प्रलै के पयोनिधि लौं लहरें उठन लागी ।
लहरा लग्यौ त्यौं हौन पौंन पुरवैया कौ ।
धीर भरी फांफरी बिलोकि मंफधार परी ,
धीर न धराय पद्माकर खेवैया कौ ।
कहां बार कहां पार जानी है जात काहू,
दूसरौ देखात न रखैया और नैया कौ ।
बहन न दै है घेरि घाटहिं लगैहै ऐसो,
अमित भरोसो मौंहिं भैरै रघुरैया कौ ।।
आनंद के कंद जग ज्यावत जगत वंद्य,
दशरथ नंद के निवाहे हीं निबहिये ।
कहैं पद्माकर पवित्र पन पातिवे कौ,
अवध बिहारी के विनोदन में वीधि विधि ।
गीह गुह गीधे के गुन्नवु बवन्द गहिये ।
रैन दिन आठौं याम सीताराम सीताराम कहिये ।।

निम्नलिखित छंद में रामनाम की वन्दना की गई है :--

तापहर पापहर कलि के कलाप हर,
तीखन त्रिताप हर तारक तरैया कौ ।
कहै पद्माकर त्यौं प्रभासी प्रकासमान,
पोषक पियूष ऐसो जैसो काम गैया कौ ।।
मुख सुखदायक सहायक सबन सूधो,
सुलभ सरन्य सरनागत अवैया कौ,
मीठो भर कठवति परतन फीको निक
नीको निरदोस नाम राम रघुरैया कौ ।।

इनकी देव-स्तुतियाँ तथा भक्ति-परक रचनायें इस तथ्य का स्पष्टीकरण करती हैं कि यह किसी सम्प्रदाय विशेष के अनुयायी नहीं थे । श्रृंगार वर्णन लिखते समय इन्होंने राधा-कृष्ण को ग्रहण किया और भक्ति की चर्चा करते

समय सीता राम की शरण ली । जिस प्रकार देव ने भक्ति और श्रृंगार को अलग-अलग रखा, दोनों के पृथक-पृथक वर्णन लिखे उसी प्रकार इन्होंने कहीं भी राधा-कृष्ण और सीता-राम का मिश्रण नहीं होने दिया । एक श्रृंगार देव रहे, दूसरे आराध्य देव ।[1]

इस प्रकार इनकी स्तोत्रात्मक रचनाओं में मंगलाचरण, वंदना, स्तुति, प्रार्थना, विरुद की विशेषताएं मिलती हैं । अपने स्तोत्रों में कवि ने राधा, कृष्ण, राम-सीता, गंगा, यमुना, कवि आदि के प्रति अपनी भक्ति-भावना प्रदर्शित की हैं ।

मंगलाचरण :

'पद्माभरण' के प्रारम्भ में ही कवि ने गणेश के स्थान पर राधा-कृष्ण और पूर्व कवियों की मंगलाचरण रूप में वंदना की है । जो नीचे के उदाहरण से स्पष्ट हो जाती है :--

राधा-राधावर सुमिरि, देखि कविन को पंद ।
कवि पद्माकर करत है, पद्माभरन सुगंध ।।

--- पद्माभरण ।

यह ध्यानात्मक मंगलाचरण है और कवि ने इसमें राधा-कृष्ण एवं कवियों का स्मरण करके ग्रन्थ प्रारम्भ किया है ।

वन्दना :

विभिन्न देवी-देवता सम्बन्धी वन्दनाओं में उनकी अनन्यता, निष्कामता, अनुराग, दास्य एवं सेव्य भावना का भी दर्शन होता है । इस प्रकार के अनेक उदाहरण उनकी रचनाओं में देखे जा सकते हैं । निम्नलिखित में कवि ने शंकर जी की वन्दना की है :--

---

१- डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी--- रीतिकालीन कविता एवं श्रृंगार रसका विवेचन पृ० ४८१ ।

देव नर किन्नर अनंत गुण गावत पै,
पावत न पार जा अनंत गुण पूरे को ।
कहै पद्माकर सुगाल के बजावतहि,
काज कर देत जन जांचक जरूरे को ।।
चन्द, की छटान जुत पन्नग फटान जुते,
मुकुट विराजै जटा जूटन के जूरे को ।
देखो त्रिपुरारि की उदारता अपार जहां,
पैये फल चारि फूल एक दै धतूरेको ।।

यमुना लहरी में यमुना जी की वन्दना की गयी है :--

धाराकप धाराधर धावत धरा में
भौंर भीरें भली चली एक संग हैं,
पद्माकर कहैं कैधौं सोभित सिवार सुम
आनंद अगार कै सिंगार रस रंग हैं ।
कैंधौं कुहू रैन रही रमि है महीतल में
कैधौं जड़े नील मनिगन के उमंग हैं ।
कैधौं तम तोम छूटा छाजती छबीली
किधौं इन्दी वर सुंदर कलिंदी के तरंग हैं।।

--- यमुना लहरी ।

<u>स्तुति :</u>

गंगालहरी, यमुना लहरी, ईश्वर पचीसी एवं प्रबोध पचासा में कवि-भक्ति-भावना परिलक्षित होती है । उनकी गंगालहरी में निर्वेद की झलक अवश्य मिलती है, पर कवित्व की चमक में वह दबी पड़ी है ।[1] यह स्तोत्रात्मक रचना है औरगंगा जी को लक्ष्यकर के लिखी गई है । वीर रस की रचनाओं की अपेक्षा इनमें कवि की हार्दिक तन्मयता का अनुभव होता

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र---हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग २, पृ० ५३६।

है । इस प्रकार जहां हृदय के उद्गार सहजरूप में व्यक्त हैं वहां काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्राय: नहीं है । ऐसी रचना इनके वास्तविक कविरूप की बोधक नहीं है । उसका अन्य प्रकार का महत्व हो, पर इनकी अन्तर्वृत्ति का नैसर्गिक रूप उसमें नहीं । उसे देखते ही यह नहीं कह सकते कि यह पद्माकर की ही कृति है । पद्माकर के इस अभाव को देखकर ईश्वर पचीसी को इनकी रचना मानने में कुछ सज्जन हिचकते हैं । तात्पर्य यह है कि भक्ति की रचना में भी एक अंश ऐसा है जिसे इनके हृदय के अनारोपित प्रवाह से पृथक कह सकते हैं । पर इसी में इनकी ऐसी रचना भी है जिसे देखते ही यह कहना पड़ता है कि वह इन्हीं की है । ऐसी रचना "प्रबोध-पचासा" में तो थोड़ी है पर "गंगा लहरी" पूरी की पूरी कवि के इस रूप को प्रकट करती है ।[१] गंगा-लहरी के छंदों पर यदि ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होता है कि प्रारम्भ के छंदों में सामान्य स्तुति है पर अंत में स्वयं उन्हीं के सम्मुख उपस्थित होकर स्तुति कर रहा है । इस में भक्ति सामान्य लोक-भावना के कारण राम, कृष्ण, विष्णु एक ही माने गए हैं ।[२] गंगालहरी के अनेक छंद इसके उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किए जा सकेते हैं :---

यमपुर द्वारे लगे तिनमें किवारे कोऊ
है न रखवारे ऐसे बनके उजारे हैं ,
कैहे पद्माकर तिहारे प्राण धारे तऊ,
करि अघ भारे सुरलोक को सिधारे हैं ।
सुजन सुखारे करे पुण्य उजियारे बहु,
पतित कतारे भव सिंधु ते उतारे हैं ।
काहू ने न तारे तिन्हें गंग तुम तारे
और जेते तुम तारे तेते नभ में न तारे हैं ।

१- आचार्य विश्व नाथ प्रसाद मिश्र -- पद्माभरण की भूमिका पृ० २२

२- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र -- अतीत भाग २ पृ० ५१४।

'प्रबोध पचासा' में अनेक छन्दों में उन्होंने भगवान श्री कृष्ण से अपने अज्ञान को दूर करने की आशा प्रकट की है :---

ऐ ब्रजचंद गोविंद गोपाल । सुन्यो क्यों न एते कलाम किए मैं ।
त्यों पद्माकर आनंद के नद हौ, नंद नंदन । जानि लिए मैं ।।
माखन चोरी के खौरिन ह्वै चले भाजि कछू भय मानि जिए मैं ।
दूरिन दौरि दुर्यौ जो चहो तो दुरौ किन मेरे अंधेरे हिए मैं ।।

---- प्रबोध-पचासा ।

प्रार्थना :

उनका 'राम रसायन' अनूदित ग्रन्थ है जिसके आरम्भ और अन्त में संस्कृत श्लोकों में प्रार्थनायें की गई हैं । राम के प्रति प्रार्थना करता हुआ कवि अपनी हार्दिक श्रद्धा का परिचय देता है :---

राजीव लोचन मद विमोचन मजित मनुज सहायकं
बहु बीचि विपुल तरे सरस्वति शैल सेतु विधायकं ।
नृ सुरारि नाशन हेत वै कर कृत शरासन सायकं
प्रणमामि राममभायिकं रघुनायकं वरदायकम् ।।

--- रामरसायन ।

विरुद :

गंगा लहरी में पद्माकर ने प्रार्थना के अतिरिक्त गंगा का विरुद गान भी किया है और उन्हें सर्वहितकारिणी जगज्जननी एवं पापियों की रक्षिका बताया गया है । इस के अनेक उदाहरण गंगा लहरी में हैं :--

आयौं जौन तोरी धोरी धारा में फंसत जात,
तिनको न होत सुरपुर तै निपात है ।
कहै पदमाकर तिहारो नाम जाके मुख,
ताके मुख अमृत को पुंज सरसात है ।

तेरो तन छूकै और छुवत तन जाको बात,
तिनकी चली न यमलोकन मैं वात है ।
जहां जहां मैया तेरी धूरि उड़ियत गंगे,
तहां तहां पापन की धूरि उड़िजात है ।।

---- गंगा लहरी ।

इस प्रकार रीतिवद्ध श्रृंगारी कवि होते हुए भी पद्माकर के स्तोत्र साहित्य में उच्चकोटि की भक्ति-भावना है जो उन्हें भक्ति कालीन कवियों की कोटि में बिठाने का प्रयत्न करती हैं । श्रृंगार सागर में गोते लगाकर इन्हों ने भक्ति -मुक्ता की प्राप्ति की है ।

ग्वालकवि :

इस परम्परा के कवियों में ग्लाव कवि की `यमुना लहरी` पद्माकर कृत `गंगा लहरी ` के ही समकक्ष रक्खी जा सकती है । यमुना जी की स्तुति करते हुए कवि ने उनकी महिमा का बड़ा ही मधुर और भक्तिपूर्ण चित्रण किया है । वे क्लेशहारिणि और स्वर्गदायिनी हैं । निम्नलिखित में उसी रूप की वन्दना की गई है ।

मारतंड तनया निहारे सुनै कौतकु मैं
सौतुक गोविंदकर केतन को भैयातूं ,
तेज करै आनन सुजानन मैं आनकरै
पान करै जग मैं प्रमानन सरैयातूं ।
ग्वाल कवि आनंद की छकनि छकैया
फेरि कठिन कलेशन के भेषन हरैया तूं ।।
शहर यमेश को जरैया यमदूतन को
कहर कुढंगनको कतल करैया तूं ।।२०।।

-----यमुना लहरी ।

एक स्थान पर कवि ने यमुना जी के फलों की भी वन्दना की है :--

शोभा के सदन लखि होत है अदम सम
पदम पदम पर पदमलता के पद,
देखें नखदामिनी घनै दुरी अकामिनी
ह्वै यामिनी जुन्हैयाकी जैरै जलसताके मद।
ग्वालकवि ललित छलान ते कलित कल
बलित सुगंधन तैं वेश मुदता के नद ,
वंदन अखंड भुजदंड युग जोरे करौं
वरद उमंड मारतंड तनया के पद ।।१।।

---- यमुना लहरी ।

अंतिम छंद में यमुना जी को गोपिकाओं के विरह के दु:ख में शान्ति देने वाला बताया गया है :---

भूलहू न जाती एकौ भुनगा हरीके भौन कैसे
तृषावंतन की तिरषा बुझाती ये।
सागर अपार में न दीखे वेशुमार
सब कासों मिलि मिलि कै बहालौं मिल जातीये।
ग्वालकवि धरम धुजान फहराती ऐसे
कैसे हूं नवरण विवेक तानि भाती ये ,
जीवती न गोपिका गोविंद के वियोग बीच
जो न यमुना की जोर जैन दरशाती ये ।।३।।

इस प्रकार ग्वाल कवि की यमुना लहरी में उनकी उच्चकोटि की भक्ति भावना का दर्शन किया जा सकता है । एक सच्चे भक्त की भांति उन्होंने अत्यन्त ही तन्मयता से उनकी वन्दना की है ।

रीतिसिद्ध कवियों का स्तोत्र-साहित्य :

रीतिबद्ध कवियों की भांति ही कुछ ऐसे कवि भी रीतिकाल में हुए हैं जिन्होंने रीतिशास्त्री ग्रन्थ न लिखकर स्वतंत्र रूप में इस परम्परा का पालन किया है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इस परम्परा के कवियों के विषय में इस प्रकार लिखा है ----'शास्त्र-स्थिति सम्पादन मात्र इनका लक्ष्य नहीं था। कहीं तो चमात्कारातिशय के लिए ये उक्तियां बांधते थे और कहीं रसाभिव्यक्ति के लिए रीतिशास्त्रों में गिनाई हुई सामग्री त्यागकर अपने अनुभव और निरीक्षण से प्राप्त उपलब्धि सामग्री या नूतनता का संनिवेश करते थे।[1] इन कवियों में भाव पक्ष और कला पक्ष समान हैं और अपनी स्वतंत्र उक्ति वैचित्र्य केवल पर उन्होंने लक्षण ग्रन्थ प्रस्तुत न करने पर भी रीतिशास्त्रीय परम्परा का पालन किया है।

बिहारी लाल का स्तोत्र-साहित्य :

रीतिकालीन कवियों बिहारीलाल का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी सतसई मुक्तक रचना होने पर भी माधुर्य-भाव से परिपूर्ण है। यद्यपि 'सतसई' कोई शास्त्रीय ग्रन्थ नहीं है पर यह कहना भी अनुपयुक्त न होगा कि लक्षणों के अनुरूप लक्ष्य प्रस्तुत करना ही सतसई का ध्येय था[2] यही कारण है कि आचार्य शुक्ल उन्हें प्रमुख रीतिकालीन कवियों में मानते हैं। बिहारी सतसई श्रृंगार रस की एक उत्कृष्ट रचना है परन्तु उसमें स्तोत्रात्मक भावना के भी अनेक दोहे हैं जिनमें राधा-कृष्ण की वन्दना के अतिरिक्त एकेश्वरवाद, निर्गुण, सगुण आदि भावों का भी विवेचन किया गया है। ये राधा-कृष्ण के मधुर रस के उपासक थे। इस प्रकार इनके दोहों में हिन्दी

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र -- हिन्दी साहित्य का अतीत पृ० ५२० भाग-२।

२- हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास भाग ६, खण्ड ४, अध्याय२, पृष्ठ-५१६

स्तोत्रों की वन्दना, प्रार्थना और सुमिरनी की शैलियां खोजी जा सकती हैं। जिनमें काव्य-तत्व के अतिरिक्त उनकी भक्ति-भावना का श्रेष्ठतम रूप विद्यमान है ।

वन्दना :-

सतसई की वन्दनाओं में उनकी समन्वय की भावना दिखाई पड़ती है । निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित होने पर भी वे निर्गुण-सगुण में कोई भेद नहीं मानते हैं । निर्गुण की व्यापकता को प्रदर्शित करते हुए उन्होंने लिखा है :--

दूरि भजत प्रभु पीठि दै, गुन विस्तारन काल ।
प्रगटत निर्गुण निकट ही, चंग रंग गोपाल ।
-------- सतसई ।

उन्होंने अद्वैत वाद विशिष्टाद्वैतवाद आदि के सिद्धान्तों को कुछ परिवर्तन से उपस्थिति किया है :--

मैं समुझ्यौ निरधार यह जगु काँचौ काँच सौ ।
एकै रूप अधार प्रतिबिम्बित लखियत जहाँ ।।
---------सतसई ।

प्रार्थना :

उनकी प्रार्थनाओं में सकाम- भावना के सर्वत्र दर्शन होते हैं । निर्गुण की भांति उन्होंने सगुण ब्रह्म का भी विवेचन किया है :--

मोहूं दीजै मोषु, ज्यों अनेक अधमनु दियौ ।
जो बाँधै ही तोषु, तौ बाँधौ अपनै गुननु ।।
-------सतसई ।

एक शुद्ध पवित्र और स्नेही भक्त की भांति वे प्रभुकी शरण चाहते हैं :---
-------सतसई ।

हरि की जति बिनती य है तुम सौं बार हजार ।
जिहि तिहिं भाँति डर्‌यौ रह्‌यौ पर्‌यौ रह्‌यौ दरबार ।।
----सतसई ।

कहीं कहीं पर उनकी प्रार्थनाओं में अन्योक्ति के दर्शन होते हैं :--

थोरेहू गुन रीझते बिसराई वह बानि ।
तुमहूं कान्ह मनौ भए, आज काल्हि के दानि ।।
कब कौ टेरत दीन रट, होत न स्याम सहाय ।
तुमहूं लागी जगत गुरु, जग नाइक जग बाइ ।।
------- सतसई ।

<u>सुमिरिनी :</u>

भक्ति का आधार ज्ञान है । जब भक्त को अपने आराध्य के महत्व का ज्ञान हो जाता है तो वह श्रद्धा और आस्था से नत मस्तक हो जाता है और तभी वह दीन होकर भगवान् के गुणों कास्मरण और चिंतन करता है :--

ज्यों ह्‌वै हों त्यों हों हुगों, हौ हरि अपनी चाल ।
हठ न करो अति कठिन है, मो तारिबो गोपाल ।।
तो बलिये भलि ए बनी नागर नंद किशोर ।
जो तुम नीके कै लख्यौ मो करनी की ओर ।।
----सतसई ।

सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
यहि बानिक मो मन सदा, बसहु बिहारी लाल ।।
----सतसई ।

इस प्रकार बिहारी की स्तोत्रात्मक रचनायें शृंगारिक भावना के साथ-साथ भक्ति -भावना से परिपूर्ण हैं । उन्होने सखी भाव से राधा-कृष्ण की माधुर्य रस पूर्ण उपासना की है । इसी उपासना ने इनके काव्य के एक बड़े अंश को प्रभावित किया है । जिससे इनका शृंगार भी भक्ति बन गया है ।

उनकी वाणी की सरसता, स्निग्धता वाक्-पटुता आदि गुण उनकी इस प्रकार की रचनाओं में भी मिलते हैं। निबार्क माधुरी के अनुसार बिहारी ~~निम्बार्क~~ निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित थे और वे इस सम्प्रदाय के एक महात्मा नरहरि दास के शिष्य थे। इसका कोई अकाट्य प्रमाण तो नहीं मिलता, पर बिहारी की रचनाओं में राधा देवी के प्रति भक्ति भावना की प्रमुखता मिलती है। बिहारी सतसई भी राधा की वंदना से आरम्भ होती है।

मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जा तनकी झाईं परै, स्याम हरित दुति होय ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि राधा जी की वंदना करता हुआ अपने सांसारिक पापों से मुक्ति की प्रार्थना करता है।

इस प्रकार की रचनाओं के मूल में यदि निंबार्क सम्प्रदाय का प्रभाव या प्रेरणा हो, तो इसे असम्भव नहीं माना जा सकता।

रसनिधि :

रीतिसिद्ध कवियों में रस निधि का नाम भी उल्लेखनीय है। जिस प्रकार इस वर्ग के कवियों में रीतिशास्त्र का बहिरंग-विधान या विवरण न होने पर भी उनकी कृतियों में उसकी आत्मा के दर्शन होते हैं, इसी प्रकार इनकी स्तोत्रात्मक रचनाओं में स्तोत्र की चेतना का सार-रूप मिलता है। ससीम मन भगवान के असीम रूप-सागर का पार नहीं पा सकता, इसका बड़ा मार्मिक वर्णन रसनिधि में किया गया है :--

नागर सागर रूपको, जीवन तरल तरंग।
सकत न तर छवि भंवर पर, मन बूड़त सब अंग ।।
----- रसनिधि

रीतिमुक्त कवियों का स्तोत्र-साहित्य :

रीतिकाल में कुछ ऐसे भी कवि हुए हैं जिन्होंने रीति शास्त्रीय परम्परा की अपेक्षाकृत मनोवेग तथा प्रेम की स्वच्छन्दता को महत्व दिया है। उन्होंने प्रेम

को हृदय की शुद्ध निश्चल भावधारा माना है । बुद्धि का उसमें गौण स्थान है । डा० मनोहर लाल गौड़ ने लिखा है ------ "वह प्रेम ईश्वर पर्यन्त और ऊंचा उठा और समस्त विश्व का प्रेम इस शरीरोत्थ ईश्वर मर्मवसायी प्रेम में समाने लगा।"[1] विरह की मार्मिक पीड़ा का वर्णन और जो स्तोत्रात्मक रचनाएं मिलती हैं उनमें भी इस विरह-भावना का प्रभाव दिखाई पड़ता है :---

> दरसै तै कहौ हो कहा घटि है घन आनंद चातिक दानिये जू ।
> बरसो सरसो अरसौ नदई जग-जीवन हो गज जानिये जू ।।।
>
> ------ सुजान ।

इस परम्परा के कवियों ने विभिन्न रूपों में काव्य रचना की है । इस धारा के कवियों ने साधन की अपेक्षा साध्य पर अधिक ध्यान दिया । साधन पर ये ध्यान न देते हों सो नहीं, उस पर भी ध्यान रहता था । पर स्थिति यह है कि जो साध्य पर ध्यान रखकर साधन पर ध्यान रखता है उसका साध्य-साधन का समन्वय बना रहता है , किन्तु जो साधन पर ध्यान अधिक रखता है धीरे धीरे साध्य उसकी दृष्टि से ओझल हो जाता है । साध्य चुपचाप खिसक जाता है, हाथ में केवल साधन बच रहता है।[2] वास्तव में इस धारा के कवियों में भगवत्प्रेम का स्वच्छन्द वर्णन मिलता है । यह प्रेम लौकिक प्रेम की शब्दावली में हुआ अवश्य है । इस परम्परा में स्तोत्रात्मक रचनाएं हैं उनमें इस प्रकार की भावना का दर्शन किया जा सकता है । इस कोटि में आने वाले कवियों की एतद्विषयक रचनाओं के निम्नलिखित विवेचन उपर्युक्त सम्बन्ध में भली भांति समझा जा सकता है । आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के शब्दों में -" श्री कृष्ण का स्वच्छंद प्रेम, जो भक्ति -भूमि पर खड़ा हो गया था, इनकी प्रवृत्ति के अनुकूल और आधार रूप में मिल गया । फल यह हुआ कि ये स्वच्छंद गायक श्री कृष्ण काव्य की ओर मुड़े और इनमें भक्ति का रंग चढ़ गया ।"[3]

१- डा०मनोहर लाल गौड़ -- घनानंद और स्वच्छंद काव्यधारा पृ० २४२

२- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र -- हिन्दी साहित्य का अतीत भाग २ पृ०६८६ ।

३- ,, ,, ,, ,, ,, ,, पृ० ६२६ ।

घनानंद :

स्वच्छन्द काव्य धारा के कवियों में घनानंद का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। निम्बार्क सम्प्रदाय से सम्बन्धित[1] होने के कारण उनकी रचनाओं में राधा की उपासना पर बल दिया गया है। उनकी रचनाओं में सुजान, शब्द, का जो अत्यधिक प्रयोग हुआ है उसके सम्बन्ध में आचार्य रामचंद शुक्ल का मत है ---"इसे शृंगार में नायक के लिए और भक्ति भाव में कृष्ण भगवान् के लिए प्रयुक्त मानना चाहिए।"[2]

घनानंद को लोग रसिक समझते हैं। यह विचार इनके स्फुट विचार देखने से उठता है परन्तु जान पड़ता है कि उमर ढलने पर इनके चित में ~~र्न~~ ग्लानि होकर हृदय में निर्वेद उत्पन्न हुआ, जिससे यह श्री वृन्दावन धाम जाकर निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित होकर ब्रजवास करने लगे।[3] यह बात उनकी राधा वृन्दावन आदि स्त्रोत्रात्मक रचनाओं से सिद्ध हो जाती है :----

वृंदावन-रानी श्री राधा। मोहन्मन मानी श्री राधा ।।१।।
जय नित्य विहारिनि श्री राधा। ब्रज सुख-विस्तारिनि
श्री राधा ।।२।।
-----घनानन्द।

हमें इनकी विभिन्न रचना संग्रहित मिली हैं जिनमें गुरु, कृष्ण, राधा, मुरली, वृन्दावन, ब्रज, यमुना, गोवर्धन, गोकुल आदि पर स्तोत्रात्मक वन्दना लिखी गई है जिनके कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं :---

---

१- ~~आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित घनानंद~~ निम्बार्क माधुरी ---- पृ० ४६३।

२- आचार्य रामचंद्र शुक्ल----- हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ०३१

३- आचार्य ~~[struck]~~ विश्वनाथ प्रसाद मिश्र----- घनानंद पृ० २४५।

गुरु वंदना :

श्री गुरुपद वर-कोकनद-नव-मकरंदहि चारित ।
मन मधुकर आनंद घन चातक-रुचि अभिलाषि ।।
-----परमहंश---वंशावली ।

श्री कृष्ण वंदना :

रसिक रंगीले भली भाँतिनि छबीले,
घन आनंद रसीले भरे महासुखसार हैं ।
कृपा घन-धाम स्याम सुंदर सुजान मोद-
मूरति सनेही बिना बूझें रिझवार हैं ।
चाह आलबाल औ अचाह- के कलपतरु ,
कीरति मयंक पेम-सागर अपार हैं ।
नित हित -संगी मनमोहन त्रिभंगी मेरे
प्राननि अधार नंद नंदन उदार हैं ।।३६ ।।
----- कृपाकंद ।

राधा वंदना:

निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित होने के कारण उन्होंने राधा की वन्दना में अत्यन्त ही भक्ति भाव का प्रदर्शन किया है :---

नटनागर-भामा श्री राधा। परिपूरन-कामा श्रीराधा ।
तरुनी मनि-दरसानि श्री राधा। सब भाँति सुलदानि श्रीराधा।।
------ नाम माधुरी ।

वृन्दावन वंदना :

राधा को वृन्दावन गाऊं । गाय गाय वृन्दावन पाऊं ।
वृन्दावन-छबि कहत न आवै । सो कैसे कहि कोउ समुझावै ।।
------ वृन्दावन मुद्रा ।

ब्रजभूमि की वन्दना :

नंदराय को ब्रज अति सोहै । नित नित ब्रज मोहन-मन मोहै ।
प्रेम पग्यौ जगमग्यौ बिराजै । सुख-समाज साजत ब्रजराजै ।।२।।
----- ब्रजव्यवहार ।

यमुना-वंदना :

श्री जुत अंगराग की धारा । जमुना-रूप अनूप अपारा ।
सबिता पिता उजागर याते । कृस्न चंद सुखपावन न्हाते ।।
----- यमुनायश ।

सुजान चरित के अनेक छंदों में इन्होंने आध्यात्मिक भावना उपस्थित की है । पूर्ववर्ती विवेचन में लक्ष्य किया जा चुका है कि 'सुजान' शब्द का प्रयोग श्री कृष्ण के लिए प्राय: विद्वानों ने माना है । इस लक्ष्य की इस प्रकार के अनेक छंदों द्वारा हो जाती है ।[१] प्रस्तुत प्रसंग में निम्नलिखित उदाहरण पर्याप्त हैं :---

रावरे रूप की रीति अनूप नयो नयो
लागत ज्यों ज्यों निहारियै ।
त्यों इन आंखिन वानि अनोखी
अघानि कहूं नहिं आन तिहारियै ।।
एक ही जीवन हुतौ सुतौ वारयौं
सुजान सकोच औ सोच सहारियै ।
रोकी रहै न, दहै घन आनंद
बावरी रीफ के हाथनि हारियै ।।४१ ।।[२]
---- सुजान चरित ।

१- द्रष्टव्य--- सुजान चरित छंद

२- द्रष्टव्य---छंद ४१ ।

सुमिरिनी :

अपनी वियोगवेलि और इश्कलता में कवि ने कृष्ण का स्मरण करते हुए अपने कष्ट मुक्ति की प्रार्थना की है :--

छबीले छैल तुम पीर काकी
बिथा की कथा तें छतिया जुपाकी ।
संजीवनि सांवरे कब घौं ठरौगे ,
मेरे साधा, विरह बाधा हरौगे ।।

----वियोगवेलि ।

क्यों चितचोर कि सारे हुआ वे पीर है ।
भौंह कमाने तान चलाया तीर है ।।
अन्तकहा हौं लेत नंद के लाडिले ।
आनंद घनके जान सुचित के लाडिले ।।

----इश्कलता ।

घनानन्द के सम्बन्धित उपर्युक्त विवेचन से प्रकट है कि उनकी विभिन्न प्रकार की वन्दनायें उनकी आध्यात्मिक आस्था को स्पष्ट करती हैं ।

आलम :

स्वच्छंद काव्य-धारा के कवियों में आलम का एक विशिष्ट स्थान है । प्रेम-रस पूर्ण रचनाओं में भी अनेक स्तोत्रात्मक अंश प्राप्त होते हैं । उदारमना के कारण इन्होंने गणेश,राम, कृष्ण, शिव, गंगा आदि की वन्दनायें की हैं ।[1] जिनमें उनकी स्वच्छंद -वृत्ति के साथ-साथ भक्ति-भावना का भी पुट विद्यमान है । `माधवानल कामकन्दला` में अनेक स्तोत्रात्मक अंश हैं । प्रारम्भ में परमब्रह्म की वंदना की गई है ।`भरतपुर से प्राप्त प्रतिलिपि में पहले गणेशकी वन्दना की गई है फिर ईश्वर की वन्दना । विवरण लेने वाले साहित्यान्वेषक ने लिखा है कि इसमें रसूल पैगम्बर की भी वंदना है[2]।

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र--हिन्दी साहित्य का अतीत भाग २ पृ० ६२६
२- ,, ,, ,, पृ० ६२०

इसका तात्पर्य यह हुआ कि उन पर सूफी कवियों का प्रभाव है। परन्तु वे समन्वय वादी कवि हैं और कृष्ण की ही लीलाओं का वर्णन नहीं करते, प्रत्युत जिस देवी देवता में उनका मन रमता है, उसीकी वंदना करने लगते हैं।[1]

उनके प्रेम में एक अभिलाषा विद्यमान है जिसकी पूर्ति की वे सदैव आकांक्षा करते हैं।

देखे टकलागै अनदेखे पलकौन लागै
देखे अनदेखे नैना निमिषि रहतहैं।
सुखी तुम कान्ह हो जु आनकी न चिंता,
हम देखे हू दुखित अनदेखे हू दुखित हैं।।
---आलमक केलि छंद।

ठाकुर :

स्वच्छंद काव्य धारा के कवियों में ठाकुर की रचनाओं में भी स्तोत्रात्मक अंश विद्यमान हैं किन्तु डा० मनोहर लाल गौड़ के मतानुसार "उनमें यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि कवि श्रृंगार भावना से प्रेरित होकर रचनाकर रहा है या भक्ति-भावना से। दूसरी ओर वह कहीं पर भी चमत्कार जनक वक्रता का मोह नहीं छोड़ना चाहते।[2] स्तोत्रात्मक छंद संख्या में बहुत हैं कम। उनकी विशेषता केवल यही है कि वे सात्त्विक भावना से परिपूर्ण हैं और उनमें भगवान् के रूप सम्बन्धी आस्था सर्वसाधारण हैं। उनका एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है :--

कंजहू तें कोरी जिन्हें वंदत महेश अज,
लागैं सबै पैंया या गुविंद गमुवारे की ।।३।
---- ठाकुरठसक।

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र-- हिन्दी साहित्य का अतीत भाग २, पृ०६२०।
२- डा० मनोहर लाल गौड़ --- घनानंद और स्वच्छंद काव्य धारा पृ० २८०।

प्रबन्ध काव्य और प्रशस्ति काव्यों में स्तोत्र :

रीतिकालीन प्रबन्ध एवं प्रशस्ति काव्यों में भी प्रचुर मात्रा में स्तोत्र हैं जिनमें काव्य-कुशलता के साथ-साथ उच्चकोटि की भक्ति भावना है। प्रबन्ध काव्यों में महाभारत गोविंद रामायण कृष्ण चरित, हम्मीर रासो आदि प्रमुख हैं। महाभारत, संस्कृत का भाषानुवाद है पर उसके अनेक स्थल स्तोत्रात्मक हैं। उसी प्रकार से इस काल की लक्ष्मण शतक, शिवाबावनी, हनुमत पच्चीसी, हनुमत छबीसी आदि रचनाएं प्रशस्ति प्रधान हैं और इनमें देवी-देवताओं की विरुदावली गाई गई है। इन पर क्रमानुसार विचार किया जा रहा है।

महाभारत (सबलसिंह चौहान):—

अनूदित काव्यों में सबलसिंह चौहान का हिन्दी महाभार स्तोत्रात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें रामचरित मानस की भांति समस्त कथानक को पर्वों के अन्तर्गत विभक्त करके काव्य का रचना-विधान किया गया है। कवि ने अपने ग्रंथ में मंगलाचरण, वंदना, स्तुति, प्रार्थना, सुमिरनी, एवं विरुद आदि हिन्दी स्तोत्रों की शैलियों का प्रयोग किया है। इन स्तोत्रात्मक अंशों में गणेश, शिव, पार्वती, श्रीकृष्ण, बद्रीनाथ आदि के प्रति कवि ने कुशलतापूर्वक अपनी भक्ति-भावना व्यक्त की है। अब इनका क्रमानुसार विवेचन किया जा रहा है।

मंगलाचरण :

महाभारत के आदि पर्व में परमपुरुष का नमस्कारात्मक रूप में मंगलाचरण लिखा गया है :—

प्रथमहिं आदि पुरुष को ध्यावौं। जा प्रसाद शिक्षा सब पावौं।
परमपुरुष आखंडित रूपा। है सर्वात्म रूप अद्भुता॥

——— आदि पर्व।

इसी प्रकार से जगदीश्वर के प्रति लिखा हुआ मंगलाचरण, वस्तु-निर्देशात्मक है :—

जगदीश्वर को धन्य जिन, उपजायों संसार ।
छितिजल नभ पावक ~~सकल~~ पवन, करि इनको विस्तार।।
नृपहि दास दासहि नृपति, पवितृण तृणहि परवान ।
जलधि अल्प सर लघुसरहिं, उदधि करैं नाणमान ।।
--- आदि पर्व ।

तीसरा मंगलाचरण गणेश के प्रति है और ग्रंथ की समाप्ति के लिए आशीर्वाद की कामना की गई है । ऐसे मंगलाचरण आशीर्वादात्मक कहे जाते हैं :--

गज मुख सुखकर दुखहरण, तोहि कहौं शिरनाय ।
कीजै यश लीजै विनय, दीजै ग्रंथ बनाय ।।
----- आदि पर्व ।

आदि पर्व में वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण के और भी अनेक उदाहरण हैं[1] । इनमें कवि ग्रंथारम्भ में अपनी पूर्व परम्परा और रीतिनियमों के प्रभाव को ग्रहण करने का प्रयत्न किया है । जैसा ऊपर बताया जा चुका है कि इस काल में समस्त कवियों सब आचार्यों ने अपने ग्रन्थों के आरम्भ में मंगलाचरणादि का प्रयोग किया है उसी परम्परा का अनुसरण महाभारत में भी किया गया है।

वंदना :

इसमें कवि निष्काम भाव से नमस्कारात्मक रूप में आराध्य का गुण कथन करता है और इस प्रकार अपनी आत्मिक शान्ति के लिए प्रयत्नशील होता है । महाभारत में अनेक स्थलों पर वन्दनायें उपलब्ध होती हैं । ये वन्दनायें राम कृष्ण, शंकर, राधा, जगदम्बा, बद्रीनाथ आदि से सम्बन्धित हैं । कवि ने राधा, कृष्ण, हलधर एवं वृन्दावन निवासियों की भी वन्दना की है[2] । असुर-मर्दिनी और तापहारिणी जगदम्बा की वन्दना अर्जुन द्वारा की गई है[3] । ~~भीष्मपर्व~~ भीष्मपर्व में भीष्म ने उनके गुणों का गान किया है । वे सबके दुखहर्ता और रक्षक हैं[4]।

१- महाभारत-----आदि पर्व ६-२०। २- महाभारत पृ०६५, पं०२०-२३।
३- वही ----- पृ० २८६, पं० १०-२४ ।
४- दीनबंधु संतन सुखदायक । पारथ नहिं मेरे रण लायक ।
पांडु वंश के रक्षाकारण । सारथि आप जगत के तारण ।
आपु सुदृढ जोती कर गहिये । भारत हौ तीक्षण शर सहिये ।
----महाभारत-आदिपर्व पृ०४०५।

स्वयं अनुमान जी ने उनके गुणों का गान किया है[1] दोणपर्व,[2] कर्णपर्व,[3] शल्यपर्व[4] आदि के प्रारम्भ में कृष्ण की वन्दना की गई है। मुशलपर्व के प्रारंभ में रामकी वन्दना की गई है।[5] पांचों पांडव द्वारिकापुरी में भगवान् श्री कृष्ण की वन्दना करते हैं।[6] धर्मराज ने शंकर की भी बन्दना की है।[7] स्वर्गारोहण पर्व में बद्रीनाथ भगवान की भी वन्दना की गई है[8]।।

उपर्युक्त वन्दनाओं में भक्तों ने गुण कथन करके अपनी हार्दिक शान्ति का अनुभव किया है। परमात्मा का श्रेष्ठ एवं सर्वात्मवादी रूप इन वन्दनाओं से परिलक्षित होता है।

<u>स्तुति :</u>

इसमें भक्त सकाम एवं निष्काम दोनों भावों से प्रभु का अनुनय करता है और अपनी इच्छापूर्ति के लिए उसी को सब कुछ समझता है। इस काल में भी विभिन्न देवी-देवताओं की स्तुतियां प्रबन्ध काव्यांतगत रची गई हैं जिनमें राम कृष्ण, राधा, गणेश, हनुमानादि प्रमुख हैं। कुछ कवियों ने भगवान् शंकर की भी स्तुतियां लिखी हैं।

स्वर्गारोहण पर्व में पांडव परीक्षित को राज्भार सौंपकर हिमालय पर चले जाते हैं और वहां बद्रीनाथादि के दर्शनों के प्रसंग में केदारनाथ भगवान् से अभिलाषा पूर्ति की कामना करते हैं।[9] इस प्रकार की स्तुतियों में सकाम-

---

१- जिनमारेउ रावन दशकन्धर। कुम्भकर्ण जिन बध्यौ धर्नुधर।
बालि मारि सुग्रीव नेवाजा। लंका कियो विभीषण राजा।
पृ० ४२५ पं० १८-२३

२- द्रोणपर्व--- पृ० ४५६ पं० १-२। ३- कर्ण पर्व -- पृ० ५१७ पं० १-३।

४- शल्यपर्व -- पृ०५४३ प० १-२। ५- महाभारत --पृ०८२५ प० ५-८।

६- महाभारत --पृ० ६४५ प० ७-२४। ७- महाभारत --पृ० ४४८-४६ प०१८-२०।

८- महाभारत --पृ० ५४-५५ प० ११-२८

९- नमामि ईश ईश्वरं। पाहिमें परमेश्वरं।
नमामि आशुतोषणं। विभंज लोक कारणं।

----क्रमश---(अगले पृष्ठ पर)

भावना विद्यमान रहती है । रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में तुलसी द्वारा की गई स्तुति भी इसी प्रकार की है ।[१]

महाभारत के अनेक स्थलों पर अपनी कामना हेतु स्तुतियां की गई हैं ।

प्रार्थना :

यह सकाम भाव की स्तुति होती है और इसमें भक्त की स्वार्थ बुद्धि निहित रहती है । सांसारिक यंत्रणाओं और भवतापों के लिए भक्त सदैव प्रभु की शरण-प्राप्ति की कामना करता है । सभापर्व में द्रौपदी द्वारा की गई प्रार्थना इसी के अन्तर्गत आती है ।[२] जब दुर्योधन चीर-हरण कर उसे नग्न करना चाहता है तब वह अपनी रक्षा के लिए प्रभु की शरण की कामना करती है ।[३] अर्जुन द्वारा शक्ति की पूजा और कल्याण की प्रार्थना में सकाम भावना पूर्णरूपेण निहित है ।[४] कृष्ण की गरिमा का गान वेद, शेष, नारद, शिव आदि गाते

---

६ (पिछले पृष्ठ का--क्रमशः)

गिरीश रूप आगरं । त्रिलोक में उजागरं ।
कपा ल माल शोभितं । पाहि मैं शरणानितं ।
नमामि गंग धारणं । अनेक भय निवारणं ।
सव्यापकं विभु प्रभो । गुणाकरं कृपालभो ।
दयालु दीन नायकं । सुसन्त सुख दायकं ।
कराल काल भक्षकं । स्वभक्त दीन रक्षकं ।
------स्वर्गारोहण पर्व पृ०२५।

१- तुलसी--- रामचरितमानस पृ० ६२६-२७.
२- सभापर्व-- पृ० १२४-२५
३- हा यादव पति हा दामोदर । हेमाधव हे हलधर सोदर ।
हे गोविंद गिरिधर बनवारी । कृष्ण कृष्ण कहि शरण पुकारी।
हे मुरलीधर राधानायक । वासुदेव अब होहु सहायक ।
खैंचत बसन कुमारग गामी। राखहु लाज दया करि स्वामी।--उद्योगपर्व पृ०२६३ ।
४- जय गिरिजा जय प्रणाति पालिका । असुर राज मृगयुद्ध जालिका ।
महिषमर्दिनी मातु कालिका । नित भक्तन की नियति घालिका ।
जय जय जय महिषासुर मर्दिनि । अजाकुजा जय मातु कपर्दिनि ।
शिवा शंभु घरणी शिवदूती । जेहि सुमिरै जग सकल विभूती ।
चण्ड मुण्ड दलिनी अरु चण्डी । ललिता ललित रूप खल खण्डी ।
--- उद्योगपर्व पृ० २८६

हैं । बाराहरूप धारण किया, हिरण्यकशिपु का वध किया, बावनावतार धारण किया, परशुराम का अभिमान नष्ट किया, चाणूर, पूतना, तृणावर्त का वध किया, सुदामा एवं गजराज की रक्षा की । अत: वे अर्जुन के भी रक्षक बनें ।[१] द्रौपदी- द्वारा अपनी अवस्था से मुक्ति प्रार्थना भी सकाम भाव से ही की गई है ।[२]

इस प्रकार महाभारत के अनेक स्थलों पर वस्तु निर्देशात्मक करते हुए प्रार्थनायें लिखी गई हैं जिनमें कामनादि पूर्ति की भावनायें सर्वत्र विद्यमान हैं परन्तु उनका भक्ति पक्ष सामान्यत: भक्ति-प्रधान न होकर प्रसंगानुसार हैं ।

हम्मीररासो (जोधराज) :

रीतिकालीन प्रबंध काव्यों में `हम्मीर रासो' बड़ा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । इसमें रीतिकालीन परम्परा के अनुसार ग्रन्थ के प्रारम्भ में गणेश, सरस्वती की मंगलाचरण रूप में वंदना की गई है । एक दोहे में कवि ने गणेश, सरस्वती, गुरु एवं सज्जनों की एक ही साथ स्मरण किया है । हम्मीर रासो के उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है :--

मंगलाचरण :

हम्मीर रासो के मंगलाचरण वस्तुनिर्देशात्मक एवं आशीर्वादात्मक दोनों हैं ।

वस्तुनिर्देशात्मक :- सिंधुर बदन अमंद दुति, बुद्धि सिद्धि बरदाय ।
सुमिरन पद पंकज तुरत विघ्न अनेक विलाय ।।१।।
दुरद वदन बुधि-सदन चंद्र लल्लाट विराजै ।
भुजा चारि आयुद्ध तेज फरसी कर राजै ।।
इक्क दंत छबि धाम अरुण सिंदुर मय सोहै ।
मनो प्रात रवि उचित कहन उपमा कवि को है ।।
कर कमल माल मोदक लिए उर उदार उपवीत वर।
सिव सिवा सुमन गणराज तुम देहु सदा वरदान वर ।।२।।

१- उद्योगपर्व पृ० २८७-२८६
२- उद्योगपर्व पृ० २८६

सरस्वती (आशीर्वादात्मक मंगलाचरण) गणेश के अतिरिक्त कवि ने विद्या की देवी सरस्वती से भी ग्रन्थ समाप्ति का आशीर्वाद मांगा है :--

पुंडरीक सुत सुता तासुपद-कमल मनाऊं ।
विसद वरण वर वसन विसद भूषन हिय ध्याऊं ।।
विसद जंत्र सुर सुद्ध तंत्र तुंबर जुत सोहै ।
विसद ताल इक भुजा द्वितीय पुस्तक मन मोहै ।।
गतिराज हंश हंसह चढी रटी सुरन कीरति विमल ।
जय माल विमल वरदायिनी देहु सदा वरदान बल ।।

सुमिरनी :

ग्रन्थ के चौथे छंद में कवि ने गणेश, सरस्वती, गुरु आदि का स्मरण किया है :--

जय विघ्न राज गणाईसदेव।
जय जगदंब जननी स एव ।
गुरु-पाद-पदम वंदन सुकीन ।
सब सज्जन पद मन लीन कीन ।।४।।

उपर्युक्त मंगलाचरणों एवं सुमिरनी में रीतिशास्त्रीय पक्ष प्रधान और भक्ति पक्ष गौण है परन्तु उनका स्त्रोत्रात्मक रूप महत्वपूर्ण है ।

प्रमुख स्त्रोत्रकार गुरु गोविन्द सिंह :

सिक्ख सम्प्रदाय की परम्परा से सम्बन्धित गुरु गोविंद सिंह की रचनाओं में स्त्रोत्रों की प्रचुरता है । धर्म गुरु होने के कारण इनके अनेक पद भक्ति-भावना से परिपूर्ण हैं और उनमें राम,सीता, कृष्ण, चंडी आदि की वंदनाएं की गई हैं । वैदेशिक सत्ता से पादाक्रान्त होने पर इन्होंने अपने देश वासियों को चंडी का स्मरण कराया है । दुर्गा सप्तशती का अनुवाद इन्होंने चण्डीशतक के नाम से किया है । उन्होंने परमात्मा के सगुण और निर्गुण दोनों

रूपों का वर्णन किया है । इतिहास में वीरकाल अपने दो रूपों में आया । परंतु प्रथम वीरकाल की परिस्थितियां कुछ और हैं और दूसरे वीरकाल की परिस्थितियां कुछ और । इसप्रकार उसे हम दो रूपों में विभक्त कर सकते हैं :--

१- प्रशस्ति प्रधान वीरकाल

२- जातीय प्रधान वीरकाल

"वस्तुत: पिछले काल में हमें शुद्ध और सत्य रूप में अपनी उमड़ती हुई भावनाओं को जोश और निजत्व की रक्षा की भावना दिखाई पड़ती है । श्री गुरु गोविंद सिंह महाराज को हम दूसरे काल में एक चमकता हुआ अलौकिक प्रतिभावान् नक्षत्र पाते हैं जिसका प्रकाश अभी तक मन्द नहीं हुआ है और न जल्दी होगा ही, बल्कि इससे नित्य नूतन किरणों का प्रकाश होता जायेगा ।"[1]

गुरु गोविंद सिंह ने नानक द्वारा प्रवर्तित पंथ को एक नवीन तेजस्वी रूप प्रदान किया ।

सिक्ख धर्म के सिद्धान्त :

पहले बताया जा चुका है कि सिक्ख सन्तों ने परमात्मा को निर्गुण, सगुण और उभयरूपों में माना है । नानक ने निर्गुण ब्रह्म के सूक्ष्म रूप का अधिक अनुभव किया है । "जपु जी " में उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया है ।[2] उनका सगुण ब्रह्म भी दो रूपों में है --(१) विराट स्वरूप (२) अन्य गुण सम्पन्न ।

स्तोत्र-साहित्य :

उनकी रचनाओं में गुरु, राम, सीता, कृष्ण, खड्ग , चंडी एवं अकाल पुरुष के महत्व का वर्णन है । एक स्थान पर विष्णु की भी स्तुति की गई है। समस्त स्तुतियों का माध्यम वंदना, प्रार्थनायें और सुमिरनी हैं ।

१- इन्द्रजीत सिंह --- गोविंद रामाण की भूमिका पृ० २

२- जपुजी गड्डी ।।३६

वंदना :

गुरुजी महाराज ने गुरु, राम, सीता, खडेग, अकाल पुरुष, कृष्ण एवं चंडी की वन्दनायें की हैं । तुलसी की भांति[1] उनमें भी समन्वय की भावना है।

गुरु वंदना:

सिक्खों ने संतों की भांति अपने गुरु के गुणों का गान किया है । वास्तव में गुरु के द्वारा ही उन्हें ब्रह्म का मार्ग ज्ञात होता है । वे उन्हें सब प्रकार का कलानिधि मानते हैं :--

जहां दिनकरको प्रताप दिनमान नाहिं ,
जहां नदिनेश को प्रताप छाइयति है ।
जहां न कलानिधि की कला की किरन एक,
जहां मृगराज के पैर धाइयति है ।
जहां सुरपति की नगति रति पति की यति ,
कहां धौल पति हूं में पाइयति है ।
जहां श्रुति सिमृति सुनि न श्रोण सुपनेहुं ,
तहां गुरु गोविंद को जस गाइयति है ।।[2]

ईश्वर वंदना :

गोविंद रामायण में उन्होंने गीता के कर्मवाद की ओर संकेत किया है। वे प्रभु से कर्त्तव्यरत होने की प्रार्थना करते हैं :---

जों प्रभु जगत कहा सो कहि हों ।
मिरत लोक में मौंन न रहिहौं ।।[3]

१- डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी -- हिन्दी साहित्य

२- गोविंद रामायण पृ० ११-१२

३- गोविंद रामायण पृ० २१

राम-वंदना :

भगवान राम अभेद अगाध, और अनंत हैं । वे कृपाल और सुरेश हैं । वे सब प्रकार से समृद्ध हैं । उनका गुण-गान समस्त देवता करते हैं । वे अत्यन्त शोभावान हैं ।[1] रघुवंश में वे अवतार स्वरूप हैं और दैत्यों का संहार करने वाले हैं :---

राम परम पवित्र हैं रघुवंश के अवतार ।
दुष्ट दैतन के संहारक संत प्राण अधार ।।
--- गोविंद रामायण पृ० ४८ ।

दशरथ भी उन्हें अत्यंत ही महत्वपूर्ण और गुणवान बतलाते हैं ।[2]

आदि शक्ति और अकाल पुरुष की वन्दना :

गुरु गोविंद सिंह ने आदि शक्ति को माता और अकाल पुरुष को पिता माना है और इस प्रकार से उनकी भी वन्दना की है ।

सर्वकाल है पिता हमारा, देवि कालिका मात हमारा ।।[3]

उन्हें सगुणरूप में विश्वास है :---

जो जो जनम पुरव ले हेरे, कहिहौं प्रभुसु पराक्रम हेरे ।।[4]

१- नृदेव देव राम हैं । अभेद -धर्म धाम हैं ।
अवुध नारि तैं भनै । अशुद्ध बात को भनै ।।
अगाध हैं, अनंत हैं। अभूत सोमवंत हैं ।
कृपालु कर्म-कारणं । बिहाल घालु तारणं ।।
अनेक संत तारणं । अदेव देव कारणं ।
सुरेश भाय रूपकां । समृद्ध सिद्ध भूषनं ।।--- गोविन्द रामायण पृ३० ।

२- गोविंद रामायण पृ० ५१

३- विचित्र नाटक अध्याय १४ छंद ५ डा० लाजवती ।

४- विचित्र नाटक अध्याय १४ छं० ४ ,, ,,

तेग वन्दना :

उनकी रचनाओं में अकाल पुरुष और तेग की वन्दनायें साथ-साथ हैं। यदि वह अमर है तो उसकी तेग भी अमर और कल्याणकारिणी है :--

खग खंड बिहंड खलदल खंड, अतिरण मंडवर वंड ।
भुज दंड अखंड तेज प्रचंड जोति अमंड भानु प्रंभ ।।
सुख संता करणं, दुरमति दरणं किल विख हरणं अस सरणं ।
जै जै जग कारण सृष्टि उबारण मय प्रीति पारण जै तेगं।।[1]

अकाल पुरुष की स्वतंत्ररूप में वन्दना :

उनका अकाल पुरुष अनादि, निराकार एवं रूपरहित है ।[2] वह सनातन और आकार रहित है[3]। वह भूत, वर्तमान एवं भविष्य में व्यापक देवताओं का देवता है ।[4] वह स्त्री एवं पुरुष दोनों रूपों में है ।[5] वह पुष्प और भ्रमर के रूप में है ।[6] कामदेव के समान सुन्दर है ।[7] रूपरेख से अदृश्य है[8]। उसका कोई माता-पिता नहीं है ।[9] वह अखंड, अनंत और अविभक्त हैं ।[10] उसके बायें हाथ में धनुष और दायें हाथ में खड्ग है ।[11] वही सम्पूर्ण संसार का निर्माता है । उसी ने कृष्ण और राम को जन्म दिया है । अनेकों ब्रह्माण्ड उसी ने बनाये हैं :---

---

१- विचित्र नाटक अध्याय १४ पृ० ४३

२- सदाएक जोत्यं अजूनी स्वरूपं ।महादेव देवं महाभूप भूपं ।
निरंकार नित्यं निरूपं त्रिवारां । कलं कारणेयं नमो खड्ग पाणं ।।
--विचित्र नाटक पृ० ४५

३- न रूपं न रेखं न रंगं न रागं । न नामं न ठामं महाज्योति जागं ।
न द्वेखं न भेखं निरंकार नित्यं । महाजोग जो गंसु धर्म पवित्यं ।। ७।।
--वही पृ० ४५।

४-	विचित्र नाटक अध्याय १४ छंद		-- पृ० ४६
५-	,,	,,	-- पृ० ११
६	,,	,,	-- पृ० १२
७-	,,	,,	-- पृ० १३
८-	,,	,,	-- पृ० १४
९-	,,	,,	-- पृ० १५
१०-	,,	,,	-- पृ० १६
११-	,,	,,	,, पृ० १८

सृजे सेतजं जैरजं उद्भिजेवं । रचो अंडजं ब्रह्माण्ड एवं ।
दिसा विदसायं जमी आसमाणं । चतुर्वेद कथ्यं कुराणं पुराणं।।२४।।
--- पृष्ठ ५१ ।

किते कृस्न से कीट कोटे बनाये । किते रामसेमेटि डारे उपाए ।
महादीन केते पृथी मांफ हुए। समै आपनी आपनी अंत मूए ।।२७।।

वह देवताओं में श्रेष्ठ, निर्विकार एकरूपा और निर्विकार हैं[1]।बड़े बड़े वीर उसे नमस्कार करते हैं । वह चक्रपाणि और जितेन्द्रिय हैं।[2] उन्होंने कृष्ण की भी वन्दना की है । परन्तु उनके कृष्ण का स्वरूप रीतिकालीन कृष्ण से सर्वथा भिन्न है और जो चित्रण किया गया है उसकी फलक हमें महाभारत में मिलती है । यह वही रूप है जिससे उन्होंने अनेक असुरों का विनाश किया है ।

स्तुतियां :

गुरु जी ने विष्णु और अकाल की स्तुतियां की हैं । इन स्तुतियों में ब्रह्म के अद्वैत और अनाम रूपों को स्पष्ट किया गया है । वह निर्विकार और अजन्मा है । उसकी शरण सबके लिए हितकारी है । प्रत्येक प्राणी अपनी इच्छा की पूर्ति उसी से करा लेता है । वह घट घट वासी है और संसार के समस्त देवता उसी की आराधना करते हैं ।

गोविंद रामायण के पूर्व में देवताओं द्वारा विष्णु की स्तुति की गई है । वे उन्हें अयोध्या में बालरूप में देखना चाहते हैं ।[3] इसी प्रकार की स्तुति बाल काण्ड में है ।[4] भागवत में भी इसी प्रकार की स्तुति है[5]। वह प्रभु की

१- नमो देव देवं नमो खड्ग धारं । सदाएक रूपं सदा निर्विकारं ।
नमो राजसं सातकं तामसेयं । नमो निर्विकारं नमो निर्जरेयं ।।--वही छंद ८५।

२- वही छंद ८८-९१

३- अवतार धरो रघुनाथ हरे । चिरराज करो सुख सो अवधे ।
विसनेस धुनं सुन ब्रह्म मुखं । अब शुद्ध चली रघुवंश कथं ।
जुह छोर कथा कवि याहि कहै । इन बातन को इक ग्रंथ बढै ।।
--- गोविन्दरामायण ।

४- बालकाण्ड छंद १८६

५- श्रीमद्भागवत-- अष्टम् स्कंध पंचम अध्याय ।

शरण में आया है । चौदह लोक उसी की आज्ञा का पालन करते हैं।[1]

चंडी चरित में दुर्गा की स्तुति कीगई है । दुर्गा के द्वारा संसार की रक्षा होती है । वह अद्वैत रूपा और कष्टों को दूर करने वाली है । वह महादानि और शत्रुओं का संहार करने वाली है । वह मित्रों की मित्र है :---

निर्जन रूप है कि सुन्दर स्वरूप हौ,
कि भूषन के भूप हौ कि दानी महादान हौ ।
प्रान के बचैया, दूध पूतन के देवैया,
रोक सोक के मिटैया किधौं मानी महामान हौ।।
विद्या के विचार हौ कि अद्वैत अवतार हौ,
कि सुद्धताकी मूर्ति हौ कि सिद्धता की सान हौ ।
जावन के जाल हौ कि कालहू के काल हौ
कि सत्रुन के साल हौ कि मित्रन के प्रान हौ ।

--- चण्डी चरित ।

समीक्षा :

इस प्रकार गुरु गोविंद सिंह का स्तोत्र-साहित्य अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है । तुलसी की भांति वे भी समन्वयवादी हैं । तुलसीदास जी ने समस्त भावों, उपासनाओं, दार्शनिक मतवादों आदि का समन्वय किया है । गुरु गोविंदसिंह इसी भावना के थे । उनका ब्रह्म अद्वैत और अकाम है । वह निर्गुण और सगुण दोनों रूपों में है । उनकी इस आध्यात्मिकता के विषय में गोविंद रामायण के संपादक ने लिखा है ::----"इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु महाराज की रचना में आध्यात्मिकता का कितना अधिक पुट है । उनका व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में स्वयं मुखरित हो उठा है । इस संसार के रंग-मंच पर उच्चकोटि के

१- फिरै चक्र चौदा पुरीयं मधानं । इसो कौन वीयं फिरै आयु सानं ।
कहो कुट कौने निखै भाज बाचै । समं सीस को संग स्त्रीकाल नाचै ।।६।।

२- इन्द्रजीत सिंह ------- गोविन्द रामायण पृ०१५

अभिनेता की तरह काम करते हुए वे स्वयं उससे निर्लिप्त रहने का उपदेश देते हैं। उनके राम तुलसी के ही समान हैं । जिस प्रकार तुलसी के राम मर्यादा पुरूषोत्तम और सर्वज्ञ हैं उसी प्रकार से गुरुजी के भी। इन्द्रजीत सिंह जी ने इस विषय में अपने विचार स्पष्ट किए हैं । उनके विचार से तुलसी के राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, वे सब कुछ जानते हैं । श्री गुरू महाराज के राम भी सर्वज्ञ हैं, अनादि और अनंत हैं । पीछे हम दशरथ के शब्दों में उसकी झलक देख चुके हैं । तुलसी के राम भी माता-पिता-भक्त-सन्त -रक्षक और परोपकारी हैं । गुरू महाराज के राम का भी वही रूप है । इसकी झलक गोविंद रामायण में सर्वत्र मिलेगी । देवताओं का कार्य साधन और असुरों का विनाश ही श्रीराम का मुख्य उद्देश्य है । [२]

गुरु जी प्रभु के अद्वैत रूप के उपासक हैं और उनके विचार से प्रकृति पुरुष में विभिन्नता होते हुए भी साम्य है । डा० लाजवती ने इस विषय में अपना मत इस प्रकार अभिव्यक्त किया है ----"श्री गुरू जी प्रभु के अद्वैत रूप कके उपासक थे । उनके प्रभु का विशुद्ध अद्वैत रूप द्वैत (प्रकृति और पुरुष) में परिणत होकर पुन: अद्वैत में निमग्न हो जाता है । इसलिए यहां यह कहना अनुचित न होगा कि वे प्रकृति और पुरुष को भिन्न और सत्य मानते हुए भी दोनों को अभिन्न व एक मानते हैं ।[३] तुलसी की भांति उनका ब्रह्म सच्चिदानंद स्वरूपा है । जिस प्रकार तुलसी ने रामरूप में ब्रह्मा-विष्णु और महेश को माना है[४] उसी प्रकार गुरू जी ने भी । डा० लाजवती ने इस विषय में लिखा है -- "गुरूजी ने हिन्दू-त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) के सर्व गुणों का सम्मिलन अपने आराध्य देव में ही किया है । वह आराध्य देव जैसा कि हमने पहले कहा

१- इन्द्रजीत सिंह --- गोविन्द रामायण पृ० २५

२- ,, ,, ,, ,, पृ० ३३

३- डा०लाजवती --- विचित्र नाटक की भूमिका पृ० ३८

४- तुलसी मस्तक तव नवै, धनुष बान लेउ हाथ ।।

----दोहावली ।

कहा है सत्-चित-आनंद रूप है । सब गुण और शक्तियां उसी सत्-चित-आनंद के अन्तर्गत हैं ।[1] इस प्रकार इनकी तुलना तुलसी से की जा सकती है । यद्यपि रीतिकाल में सबल सिंह चौहान की महाभारत में अनेक प्रकार की स्तुतियां एवं वंदनायें हैं परन्तु गुरु जी के स्तोत्रों जैसी तेजस्वी एवं भक्तिविभोरता उनमें नहीं है । उन्हें रीतिकाल का प्रमुख स्तोत्रकार कहा जा सकता है । उनकी-सी वर्णन-शैली अन्यत्र दुर्लभ है ।

अन्य :

प्रशस्ति काव्य :

रीतिकाल में दो प्रकार की प्रशस्तियां लिखी गई हैं ।--(१) राज प्रशस्तियां (२) देवी -देवता सम्बन्धी प्रशस्तियाँ । राज प्रशस्तियों में शिवराज भूषण, हिम्मत बहादुर विरुदावली, सुजान चरित आदि प्रमुख हैं । परन्तु शिवराज भूषण के अतिरिक्त शेष स्तोत्र-साहित्य के अन्तर्गत नहीं रक्खी जा सकतीं । शिवराज भूषण में कवि ने शिवाजी को राम कृष्ण आदि अवतार मान कर उनका यशोगान किया है । राम एवं कृष्ण ने अवतरित होकर संसार को पापियों से मुक्त किया था और धर्म की रक्षा की थी । शिवाजी ने भी वही कार्य किया । यही कारण है कि भूषण ने शिवाजी की इष्टदेव के रूप में विरुदावलि गायी है । शिवराजभूषण में इसके अनेक उदाहरण हैं जो इस तथ्य के प्रमाणस्वरूप उपस्थित किए जा सकते हैं ।

दशरथ जू के राम मे वसुदेव के गोपाल ।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज भूपाल ।।१।।
उदित होत सिवराज के मुदित भए द्विजदेव ।
कलियुग हट्यो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव ।।१२।।
---श्री शिवराजभूषण ।

१- डा० लाजवती --- विचित्र नाटक की भूमिका पृ० १४

तुम सिवराज ब्रजराज अवतार आजु तुमही
जगत काज पोषत भरत हौं ।
तुम्हैं छोडि पाते काहि विनती सुनाऊं मैं
तुम्हारे गुन गाऊं तुम ढीले क्यों परत हौं ।
भूषन भनतवहि कुल मैं भयौ गुनाह
नाहक समुझि यह चित्त मैं धरत हैा ।
और बांमनन देखि करत सुदामा सुधि
मोहि देखि काहे सुधि भृगु की करत हौं ।।७५।।

--- शिवराज-भूषण ।

तेगहि के भेंटे जैान राकस मरद जाने
सरजा सिवाजी राम ही को अवतार है।।१६६।।

-----शिवराजभूषण ।

भूषण की यह भावना अन्य प्रशस्ति काव्यों में नहीं मिलती । उन प्रशस्ति काव्यों में स्तोत्रात्मक रचनायें या तो मंगलाचरण के रूप में मिलती हैं अथवा किसी विशेष प्रसंग पर किसी देवी-देवता की वंदना के रूप में ।

देवी देवता सम्बन्धीः- दूसरी प्रकार की प्रशस्तियां देवी-देवता से संबन्धित हैं । इनमें अधिकांश रचनाएं वीर शिरोमणि हनुमान जी पर लिखी गई हैं । शेष देवताओं की संख्या भी परिमित है -- दुर्गा, कालि नृसिंह तक । संस्कृत के हनुमन्नाटक के हिन्दी में कई एक अनुवाद भी हुए जिनमें से हृदयराम का कवित्त-सवैयों में अनुवाद सुंदर है । इस पद्धति पर रची पुस्तकों में भगवंत रायखीची का `अनुमान पचासा ` मनियार सिंह की `हनुमत छब्बीसी ` मून का `राम-रावण -युद्ध `, बहादुर सिंह (चरखारी) कृत `हनुमान चरित्र`, वीर रामायण, खुमान (मान) (चरखारी) कृत हनुमान-नखशिख, हनुमान पंचक, हनुमान पच्चीसी, लक्ष्मण शतक, नृसिंह-चरित्र, नृसिंह पच्चीसी का नाम विशेष उल्लेख योग्य है।[१]

१- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र--- हिन्दी साहित्य का अतीत भाग २ पृष्ठ ७०२ ।

प्रमाण स्वरूप कुछ देव-प्रशस्तियों का क्रमानुसार वर्णन किया जा रहा है :---

मनियार सिंह :

हनुमत छब्बीसी :

इस प्रशस्ति ग्रंथ में कविने हनुमान जी की वीरता, शीलता, पराक्रम आदि का विरुद गानकिया है जो अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है :--

अमय कठोर वानी सुनि लछिमन जू की,
मरिवे को चाहि जो सुधारी खल तरवारि ।
वीर हनुमान तेहि गरजि सुहासकरि,
उपरि पकरि ग्रीव भूमिलै परै पछारि ।।
पुच्छ ते लपेटि फेरि दंतन दरदराइ,
नखन नकोटि चौंथि देत महिडारि डारि ।।
उदर विदारि मारि लुत्थन को टारि वीर,
जैसे मृगराज गजराज डारै फारि फारि ।।

--- हनुमत छब्बीसी ।

हनुमत पचीसी (भगवंतराम खीची) :

इस प्रशस्ति रचना में कवि ने हनुमत छब्बीसी की भांति ही पवनपुत्र की गरिमा, युद्धकला एवं भक्ति का यशोगान किया है । एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है :--

विदित विसाल ढाल भालु-कपि-जाल की है,
ओट सुरपाल की है तेज के तुमार की ।
जाही सो चपेटि कै गिरायै गिरि गढ जासों,
कठिन कपाट तोरे, लंकिनि सों मार की ।
भनै भगवंत जासौ लागि भेंटे प्रभु ,
जाके जस लखन को छुभिता सुमार की ।

ओढ ब्रह्म-अस्त्र की अवाती महाघाती वदी
युद्ध-मद-माती छाती पवनकुमार की ।।

---हनुमत पचीसी ।

<u>लक्ष्मण शतक (समाधानकवि)</u>:

रीतिकालीन देव-प्रशस्तियों में समाधान कवि का 'लक्ष्मण शतक' विशेष उल्लेखनीय है । सम्पूर्ण ग्रन्थ में कवि ने रामानुज लक्ष्मण के गुणों का अत्यन्त ही मनोहारी रूप उपस्थित किया है । वह शक्तिवान् , शीलवान् , आज्ञापालक, सर्वगुणातीत, एवं महापराक्रमी योद्धा हैं । कतिपय उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किए जा सकते हैं :---

प्यारो सीताराम को उज्यारो रघुवंश को
अन्यारो उन पैजवारो न्यारो रूरो रनको।
रवि कुल मंडन प्रचंड वल वंड भुजदंडन उदंडन
सो पण्डन पलनको ।।
समाधान रच्छक अपच्छ पच्छ लक्ष्मन
अच्छमन लच्छमन अच्छ दीन जनको ।
सिंहन को सर्म गर्भवंत को गर्भ गंज अर्भ
अवधेश को सगर्भ सत्रुहन को ।।४।।

आयो लखि तीर वीर तेज जगमग्यौ
मनधीर उगमग्यौ वैन उग्यो सो डगनते।।
भनै समाधान वीर भरत के मारे
परचंड भुजदंड वलतारन की लगवतें ।।
भिदुर सो मोह मेहि गिरि मेहिकै गिरायो गिरि
जैसो गिरिदेह गिरयौ गिरिसो गगनते ।।६७।।

जय जय सुर उच्चरिहं वृष्टि कुसुमा बलि सज्जहिं ।
जामवंत हनुमंत अंगदादिक भटगज्जहिं ।।

जामवंत हनुमंत अंगदादिक मृगगज्जहिं ।
इन्द्रजीत कहनीति चल्यौ सौमित्री हित करिकहि,
सीस दससीस नंद को हँसि अग्र धरि ।
जुग जोरि पानि समाधान कह सीस आनि पद पंकज लसगही,
रनधीर वर मिल्यौं आनि रघबीर कहैं ।।१२८ ।।
जय लछिमन रनधीर वीर वीणधि वीरवर ।
जय उदंड भुजदंड कंड को छंदंड धर ।

जय अमंद आनंद कंद चल कंदनि कंदन ।
कृत वृन्दारक वृन्द चरन अरविंदन वंदन ।
जय जय समथ्त्थ दशरथ्थ सुत हथ्थ
मथ्थय समथ्थ सुत ।
जन वानि जानि समाधान सिर धरहु पानि
वरदान जुत ।।[1]
--- लक्ष्मण शतक ।

इस प्रकार रीतिकालीन देव प्रशस्तियाँ अत्यन्त उच्चकोटि की हैं । उनकी कलात्मकता और भावात्मक अनुभूति और भी उल्लेखनीय है ।

नीति-साहित्य में स्तोत्र :

हिन्दी में नीति सम्बन्धी साहित्य मूलतः दार्शनिक तत्वज्ञान के माध्यम से व्यक्त किया गया है । प्रायः कवियों ने उसमें उपदेशात्मक रूप गृहण किया है । परन्तु ऐसे साहित्य में भी स्तोत्रात्मक अंश विद्यमान हैं जिनका भक्तिपक्ष महत्त्वपूर्ण है । इनमें दीनदयाल गिरि एवं गिरधर कविराय विशेष उल्लेखनीय हैं ।

दीनदयाल गिरि :

नीति सम्बन्धी रचनाकारों में दीन दयाल गिरि के लिखे अनेक ग्रंथ

१- समाधान कवि ---- लक्ष्मण शतक ।

हैं जिनमें अन्योक्ति- कल्पद्रुम, अनुराग बाग, विश्वनाथ नवरत्न आदि प्रमुख हैं । अनुरागबाग में श्रीकृष्ण सम्बन्धी एवं विश्वनाथ नवरत्न में शिव सम्बन्धी अनेक स्तोत्रात्मक अंश हैं । अन्योक्ति कल्पद्रुम में कवि ने अन्योक्ति रूप अपने आराध्य का स्तुति-गान किया है । उनकी रचनाओं में हिन्दी-स्तोत्रों की मंगलाचरण, वंदना, स्तुति एवं प्रार्थना शैलियां विद्यमान हैं।

अन्योक्ति कल्पद्रुम :

मंगलाचरण :

अपने ग्रंथ के प्रारम्भ में कवि ने गणेश जी की वंदना स्वरूप मंगलाचरण किया है :---

वंदौं मंगलमय विमल, कृत-सेवक सुख-दैन ।
जो करि -वर-मुख मूक हौ गिरा न चाव सुचैन ।।
गिरा न चाव सुचैन, सिद्धि दायक सब लायक ।
पसुपति-प्रिय हिय-बोधकरन, निरजर-गन-नायक ।
बरनैं दीन दयाल दरसि पदद्वंद अनंद मैं ।
लंबोधर मुदकंद दवै दामोदर वंदौं ।।२।।

वंदना :

कवि ने कल्पद्रुम पर अन्योक्ति करके अपने इष्टदेव की वंदना की है:--

दानी हौ सब जगत में एकै तुम मंदार ।
दारन दुख दुखियान कौ अभिमत-फल-दातार ।।
अभिमत फल दातार देव गन सेवैं हित सों ।
सकल संपदा सोह छोह किन राखत चितसों ।।
बरनैं दीनदयाल छाँह तव सुखद बखानी ।
ताहि सेह जो दीन रहै दुख तौक्स दानी ।।

---३

स्तुति :

अपने अनुराग बाग में उसने श्री कृष्ण की स्तुति की है :--

कोमल मनोहर मधुर सरताल सने,
नूपुर-निनादनिसों कौन दिन बोलिहैं ।
नीके मन ही के बुद-वृंदन सुभोतिन को,
गहि कै कृपा की अब चोंचनसों तोलि हैं ।।
नेमधरि छेम सों प्रमुद होय दीनदयाल,
प्रेम कोकनद बीच कबधों कलोलि हैं ।
चरन तिहारे जदुबंस-राजहंस ! कब मेरे मन-मानस
में मंद मंद डोलि हैं ।।

--- अनुरागबाग ।

प्रार्थना :

कवि ने दिवाकर को लक्ष्यकरके अपने आराध्य से सांसारिक कष्ट - मुक्ति की प्रार्थना की है :--

लीने आभा आपनी है अर्क-आधार ।
दीजै दरसन प्रगटि कै तम दुख दलो अपार ।।
तम दुख दलो अपार निसाचर गाजि रहे हैं ।
भूल-दीप खद्योत उलूक विराजि रहे हैं ।।
बरनै दीनदयाल कोकनद कोक हु दीने ।
कब ह्वै हो हरि उदय तुम्हें बिन लोक मलीने ।।२०।।

---अन्योक्ति कल्पद्रुम ।

उपर्युक्त स्त्रोत्रात्मक अंश भक्ति भावना के अतिरिक्त कलात्मक रूप में भी महत्वपूर्ण है ।

गिरधर कविराय :

नीति विषयक रचनाकारों में गिरधर कविराय की रचनाओं में भी

अनेक स्तोत्रात्मक अंश हैं जिसमें कवि की भाव प्रवणता एवं आध्यात्मिकता का पूर्ण पुट मिलता है । प्रमाणरूप में एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है :---

नैया मेरी तनकसी बोझी पाथर भार ।
चहुंदिसि अति भौंरे उठत केवट है मतवार ।।
केवट है मतवार नाव मंझधारहिं आनी ।
आंधी उठत प्रचण्ड तिहूं पर बरसत पानी ।
कह गिरधर कविराय नाथ हौ तुमहिं लैवैया ।।
उठाहि दया को डांड घाट पर आवै नैया ।।

उपर्युक्त में कवि ने सांसारिक पापों से मुक्ति की प्राथर्ना की है ।

रीतिकाल के संत-साहित्य में स्तोत्र :

साहित्य की जो प्रवृत्ति एक बार प्रारम्भ हो जाती है वह किसी न किसी रूप में सभी परम्पराओं में चलती रहती है । कबीर आदि की संत-परम्परा रीतिकाल में भी चलती रही और उसमें प्रचुर साहित्य लिखा गया । इन संत कवियों में अखा, जगजीवनदास, गरीबदास, चरनदास आदि उल्लेखनीय संतकवि हैं जिनकी बानियों में अनेक स्तोत्रात्मक अंश विद्यमान हैं । कुछ संतों का यहां उल्लेख किया जाता है ।

संत कवि अखा :

गुजरात के संत कवियों में अखा का स्थान अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण है । उनकी आत्मा निरंतर ईश्वर प्रेम में विह्वल रहती थी और आत्मानुभूति के बल पर ही उन्होंने ब्रह्म की प्राप्ति की थी। पूर्व संतों की भांति उन्होंने भी गुरु एवं एकेश्वर ब्रह्म की वंदना की है । इस प्रकार इनकी बानियों में स्तोत्रात्मक अंश मिल जाते हैं जिन्हें प्रमाण स्वरूप यहां प्रस्तुत किया जाता है :--

गुरु वंदना :

हितकारी सद गुरु बिना और नहीं संसार ।
राखे भवमा भटकता पलमें पावे पार ।।[१]

१- अखा -- अखाय रस सं० डॉ० चंद्र प्रकाश सिंह पृ० २६६ ।

इन्होंने भी गुरु और गोविन्द में कोई भेद नहीं माना है :--

गुरु गोविंद गोविंद सो गुरु गुरु गोविंद गनति नहिं न्यारा।
बैठे शुकदेव गुरु बीन गावे परीति सुनावे सुनारा ।।[1]

अखा ने परमात्मा को पूर्ण ब्रह्म मानकर वंदना की है :---

पूरन ब्रह्म कहे सो पूरन पूछ्यो गिरजा गिरजा पति सूं।
पूरन ब्रह्म ठहराव सुन्यो जब कह्यो आप पुरुष प्रजापति सू ।।
पूरन ब्रह्म ठहराव कीनो है कृष्ण वाशिष्ठ गुरु हरजायतिसूं।
महाजन ब्रह्म ठहेराव अखो के है सत्य मान्य शब्द न रजापत्य सूं ।।[2]

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि अखा के स्तोत्रात्मक अंशों में पूर्व संतों की सभी प्रवृत्तियां विद्यमान हैं।

चरनदास :

इनकी रचनाएं योग साधना, भक्ति और ब्रह्मज्ञान सम्बन्धी हैं। अन्य संतों की भांति इन्होंने भी गुरु को ईश्वर से श्रेष्ठ माना है :--

रामजू मैं गुरु न बिसारुं। गुरु के समहरि कौन निहारुं ।।[3]

इनकी स्तोत्रात्मक रचनाओं में निष्काम भावना पर अधिक बल दिया गया है।

रीतिकालीन साहित्य की सामान्य विशेषताएं :

१- प्राय: समस्त कवियों ने अपने काव्यों की सफलता के लिए ग्रंथारम्भ में गणेश, सरस्वती, राधा, कृष्ण आदि देवी-देवताओं की मंगलाचरण किया है।

२- अधिकांश रचनाएं श्री कृष्ण एवं राधा से ही सम्बन्धित हैं। इसके विषय में डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी ने लिखा है ---- श्री कृष्ण तो इन दिनों

१- अखा - अज्ञाय रस सं० कुं० चंद्र प्रकाश सिंह पृ० १४०

२क अखा- ,, ,, ,, पृ० १४५

३- चरनदास -सहज प्रकाश पृ० ३

जन-मन-मन अधिनायक थे। अतः प्रायः सभी कवियों ने कृष्ण भक्ति परक रचनाएं लिखी थीं।[1]

३- शृंगार की प्रधानता होने के कारण इस काल के स्तोत्र-साहित्य पर उसकी पूर्ण छाप पड़ी है। अधिकांश कवियों ने इस शृंगार भावना से प्रभावित होकर देवी-देवताओं का शिखनख वर्णन किया है। डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी ने इसके विषय में लिखा है :-- "भक्ति भावना के अन्तर्गत उपास्यदेव में अनंत अनंत शक्ति और अनंतशील के साथ अनंत सौंदर्य की भी प्रतिष्ठा हुई। भक्त कवियों ने भगवान के अनंत सौन्दर्य से समन्वित विश्वमोहक स्वरूप का जी खोलकर वर्णन किया। उन्होंने भगवान् के अंग-प्रत्यंग का चोटी से लेकर पैर तक के नाखूनों तक एक एक अंग का भाव पूर्ण मनोमुग्धकारी वर्णन किया है। भक्ति-भावना के अनुकरण पर शृंगार रस निरूपण में भी स्वरूप-वर्णन की प्रणाली आ गई जो कृष्ण राधा के नखशिख वर्णन से प्रारम्भ होकर लौकिक नायक-नायिकाओं पर आकर रुकी।[2]

४- इस काल के स्तोत्र- साहित्य में कला पक्ष-प्रधान है और भक्ति-पक्ष गौण। अधिकांश कवियों ने प्रेम और अनुभूति को ही अधिक महत्व दिया है।

५- रीति शास्त्रीय परम्परानुसार इस काल के प्रायः सभी कवियों ने अलंकारों एवं अनेक प्रकार के छंदों का स्वच्छंदता से प्रयोग किया है।

६- राज प्रशस्तियों के समानान्तर ही देव प्रशस्तियों की रचना भी इस काल की उल्लेखनीय बात है।

७- शुद्ध स्तोत्र के दृष्टिकोण से इस काल की अधिकांश रचनायें संभवतः स्तोत्रात्मक अथवा स्तोत्राभास ही मानी जा सकती हैं। फिर भी इस काल के कुछ कवियों ने इस श्रेणी की उत्कृष्ट रचनायें की हैं जिनका विवरण यथा-स्थान प्रस्तुत किया जा चुका है।

१- डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी -- रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस का विवेचन पृ०३२५।

२- ,, ,, ,, ,, ,, पृ० ३२६

इस प्रकार रीतिकालीन स्तोत्र-साहित्य अपने प्रत्येक अंग-प्रत्यंग से महत्त्व पूर्ण कहा जा सकता है । भक्ति का स्थान [illegible] की कलात्मकता एवं चमत्कारिता से आच्छन्न हो गया है ।

श्री पांडव यशेन्दुचंद्रिका (स्वामी स्वरूपदास जी) :

चारणी काव्य-परम्परा आदि काल से डिंगल एवं पिंगल दोनों ही क्षेत्रों में अविच्छिन्न रूप में प्रवाहमान रही है । यह ग्रन्थ उसी परम्परा का एक रत्न है । इस सम्पूर्ण ग्रन्थ में महाभारत की कथा को सोलह मयूखों में विभक्त किया है । प्रारम्भ के तीन मयूखों में विभिन्न देवी-देवताओं के मंगलाचरण, वंदना एवं प्रार्थनायें हैं जो गणेश, राम, श्री कृष्ण, राधा, गुरु, हनुमान, सीता, कल्पवृक्ष, शिव आदि से सम्बन्धित हैं । प्रमाण स्वरूप कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं :---

मंगलाचरण :--

गुणा लंकारिणी वीरौ, धनुष तीत्र विधारणी ।
भूभार हारिणी वन्दे, नरनारायणौ उभौं ।।१।।

--- प्रथम मयूख ।

राम वंदना : --

रामा रमानाथ राजा त्रिहूं लोक ।
संधार के त्रास हंता कुलं शोक ।
मायापती मोक्षदाता सदानंद ।
धाता पिता राम आनंद के कंद ।।५।।

----द्वितीय मयूख ।

कृष्ण की प्रार्थना :

नाथा हरी नाथ राधापती दास की
श्याम कामारि के इष्ट आधार ।

एकाग्रता मोर तो पाव के ध्यान की
राधिये देव देवाधि दातार
बोलैं सबै वेद पावैं नहीं भेद तो
और का जीव जानै यहा राज ।
गावैं कहा पीव पावैं कहा तो गती
आपकी जोर माया मिल्यौ आज ।।५८

-------द्वितीय मयूख ।

स्वामी स्वरूपदास जी एक संत कवि थे ; अतः प्रस्तुत ग्रन्थ में आए हुए स्तोत्रात्मक अंशों की भक्ति-भावना एवं कलात्मकता अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है । इनकी भाषा पर डिंगल की छाप है ।